मासिक

अध्यात्म संदेश

जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन की मासिक ई – पत्रिका

वर्ष: 3 | अंक: 11 | पृष्ठ: 52 | मूल्य: नि:शुल्क | इंदौर–उज्जैन | गुरूवार 1 जून 2023 | ज्येष्ठ/आषाढ़ मास (4), विक्रम संवत् 2080 | इ.संस्करण

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

प्रेरणा स्रोत
महासिद्ध गुरू गोरक्षनाथ जी

सलाहकार समिति
महंत बालक नाथ योगी जी
गद्दीनशीन महंत, मठ अस्थल बोहर, रोहतक
संसद सदस्य (लोकसभा), अलवर, राजस्थान
कुलाधिपति, श्री बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय (हरियाणा)

महंत पीर योगी रामनाथ जी
भर्तृहरि गुफा, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

महंत डॉ. योगी विलासनाथ जी
अध्यक्ष, श्री गुरू गोरक्षनाथ शिव पंचायतन मन्दिर (ट्रस्ट), गाळणे (महाराष्ट्र)

राष्ट्रसंत बालयोगी उमेशनाथ जी
पीठाधीश्वर–वाल्मीकि धाम, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

प्रधान सम्पादक
योगी शिवनन्दन नाथ

सम्पादक मंडल
वरिष्ठ सम्पादक
डॉ. संतोष खन्ना (दिल्ली)
सम्पादक
डॉ. शकुंतला कालरा (दिल्ली)
उपसम्पादक
श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा (लखनऊ)
सुश्री इंदु सिंह "इन्दुश्री" (मध्य प्रदेश)

ग्राफिक्स
IDEAwave COMMUNICATIONS

प्रकाशक एवं स्वामी
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

- गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउंडेशन सर्वाधिकार सुरक्षित। किसी भी रूप में सामग्री की नकल प्रतिबंधित।
- पत्रिका में प्रकाशित सामग्री का समस्त उत्तरदायित्व लेखकों का है। प्रकाशक, प्रधान संपादक एवं संपादक मंडल इसके लिए किसी भी प्रकार से उत्तरदायित्व नहीं होंगे।
- समस्त विवादों का निस्तारण, मध्य प्रदेश सीमांतर्गत सक्षम न्यायालयों में किया जाएगा।

editor.adhyatmsandesh@gmail.com

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ क्र.
1	संपादकीय	डॉ. शकुंतला कालरा	03
2	पर्यावरण और सनातन....	आकांक्षा यादव	05
3	स्वार्थी न बनें संनिष्ठ रहें	डॉ. प्रदीप उपाध्याय	08
4	मन पर नियंत्रण पौराणिक ग्रंथों...	डॉ. अलका शर्मा	10
5	मित्रता के दोहे	प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे	12
6	पिता एक रिश्ता है तो...	कृष्ण कुमार यादव	14
7	क्या है भारतीय संस्कृति में...	पंडित कैलाशनारायण	17
8	मेरी मां	संजू पाठक	19
9	पर्यावरण चिन्तन 5	डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह	20
10	अनुभवों की खूबसूरत किताब 'पिता'	श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा	21
11	एक मुलाकात	डॉ. अनीता पंडा 'अन्वी'	23
12	रामचरित मानस एवं राक्षसों के...	प्रो. विनीत मोहन औदिच्य	24
13	वैदिक विमान विज्ञान...	डॉ. विदुषी शर्मा	27
14	शिवोपासना जनजातीय समाज	रीता रानी	29
15	कुशल प्रशासक लोक माता...	भावना दामले	31
16	श्रीराम चरण वन्दना	ब्रह्मेश्वर नाथ मिश्र	32
17	सुंदरकाण्ड में निहित प्रतीकार्थ...	डॉ. शकुंतला कालरा	33
18	गतिशील जीवन शैली का...	डॉ. अजय शुक्ला	35
19	जनक नंदिनी	डॉ. सुमन मिश्रा	37
20	महत चिंतन श्रृंखला	विजय कुमार तिवारी	38
21	घातक है शारीरिक श्रम की उपेक्षा	डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम	40
22	लिव इन रिलेशनशिप	डॉ. अर्चना प्रकाश	42
23	सफ़लता का सफ़र	सुजाता प्रसाद	43
24	बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय	मेघना रॉय	44
25	मृदु हृदय राम कृपाला	डॉ. सन्तोष खन्ना	45
26	चार पैसे वाला गणित	गोवर्धन दास बिन्नानी 'राजा बाबू'	48
27	आई शरण तिहारे	मधुबाला शांडिल्य	49
28	अशांत चित्त को शांत करने का...	डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)	50
29	सद्कर्मो से बनती पहचान	लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव	52

संपादकीय

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)

सभी रचनाकारों एवं पाठकों को मेरा सादर अभिवादन।

जून माह अपने साथ कुछ विशेष दिवस और जयन्तियाँ ला रहा है। 3 जून 2023 को ज़्येष्ठ माह में पड़ने वाली वट सावित्री पूर्णिमा का अत्यंत महत्व है। इस दिन महिलाएं पति की लंबी आयु के लिए उपवास रखती हैं। धार्मिक मान्यता अनुसार इस दिन महिलाएं वट वृक्ष के नीचे भगवान विष्णु और लक्ष्मी जी की पूजा करती हैं। हम सबने सुनी है सावित्री और सत्यवान की कथा। कैसे सावित्री यमराज से अपने पति सत्यवान को छीन लाई। यात्रा में अचानक सावित्री के पति सत्यवान की मृत्यु हो गई और सावित्री प्राण लेने आए यमराज के आगे अड़ गई कि वह अपने पति के बिना जीवित नहीं रहेगी।डॉक्टर अग्रवाल के अनुसार जिसे मेडीकल साइंस में कार्डियक अरेस्ट होता है, उसकी साँस रुक चुकी होती है। वह मर चुका होता है। उसकी छाती पर जब आप पूरी तरह बैठकर दोनों हाथों से बार-बार दबाव डालते हैं तो उस बैठने के आसन को 'सावित्री आसन' कहते हैं। इसी तरह सावित्री ने सत्यवान की छाती पर बैठकर पूरी ताकत से हमला बोला था। वह चीख-चीखकर उसकी छाती को पीटती हुई कहती है कि मैं तुम्हें जाने नहीं दूँगी। तुम इस आखिरी यात्रा पर मुझे अकेला छोड़कर नहीं जा सकते। और देखते ही देखते सत्यवान के प्राण लौट आते हैं। डॉ. अग्रवाल के अनुसार पांच मिनट के भीतर इस प्रक्रिया के द्वारा साठ प्रतिशत लोगों के प्राण बचाए जा सकते है।

5 जून को पर्यावरण दिवस है। आजकल दुनिया में जो सभ्यता है, उसे इंडस्ट्रियल सिविलाइजेशन यानी औद्योगिक सभ्यता कहते हैं। इसने पूरे विश्व को खुशहाल तो किया है, किंतु इससे पर्यावरण प्रदूषित हुआ है। प्रकृति का संतुलन डगमगाया है। दुनिया की हवा दूषित होती है। गगनचुंबी चिमनियों का धुआँ, सड़क पर दौड़ती गाड़ियों का धुआँ, पूरे वायुमंडल को प्रदूषित कर प्राणियों के श्वसनतंत्र को बुरी तरह प्रभावित कर रहा है। नदियों और समुद्र का जल कारखानों के फेंके हुए जल से प्रदूषण-ग्रस्त होते जा रहे हैं। कीटनाशी दवाओं और रासायनिक खाद का विष हमारी मिट्टी को प्रदूषित कर रहा है। आज जलवायु-परिवर्तन के क्या-क्या परिणाम हो सकते हैं? आइए सारे संसार में पर्यावरण-रक्षण की चेतना जगाएँ। पर्यावरण की रक्षा और संवर्द्धन, उसका पोषण और पुष्टि, उसकी शुद्धि और पवित्रता का न केवल संदेश दें वरन् उसे व्यवहार द्वारा अपने आचरण द्वारा दिखाएँ भी। 18 जून 2023 को

'फादर्स डे' है। यह दिन दुनिया भर में मनाया जाता है और सभी पिताओं को समर्पित है, ताकि उन्हें असाधारण महसूस कराया जा सके। क्या 'फादर डे' एक दिन होता है? मैं नहीं जानती जो पिता आपका निर्माता हो। आपको जिसने शरीर और व्यक्तित्व दोनों दिए हैं, जिसकी वजह से आज आपके पास एक 'स्टेटस है। जिस पिता ने बच्चे की छोटी सी छोटी खुशी और जरूरत के लिए अपनी सारी-जिंदगी दे दी उस पिता को हम क्या केवल एक दिन के लिए याद करें। जून माह में ही ओड़िशा के पुरी में हर साल की तरह आषाढ़ माह में भगवान जगन्नाथ की रथ यात्रा निकाली जाएगी। जगत के स्वामी यानी भगवान जगन्नाथ श्रीकृष्ण का ही एक रूप हैं। पुरी रथ-यात्रा आषाढ़ माह के शुक्ल पक्ष की द्वितीय तिथि से शुरू होती हैं। यह उत्सव पूरे 10 दिनों तक मनाया जाता है। इसी माह 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस है। दुनिया भर में हर साल योग के प्रति जागरूकता फैलाने, लोगों के स्वास्थ्य पर इसके लाभ और प्रभाव को बतलाने के लिए इसे मनाया जाता है। 'योग' का अर्थ है जुड़ना। यह व्यक्ति के मन, शरीर और आत्मा को एक करने के लिए एक महत्वपूर्ण अभ्यास है।

वीरांगना दुर्गावती का बलिदान दिवस भी है एवं इस माह गुरु हरगोबिंद सिंह-जयंती है। हमारा इतिहास ऐसे देशभक्त वीरों और वीरांगनाओं की वीरता, देशभ. ात्ति से भरा पड़ा है। आइए उनकी पावन स्मृति का वंदन करते हुए हम सभी त्योहारों को प्रसन्नतापूर्वक मनाएं। इसी मंगल कामना के साथ-

-शकुंतला कालरा

05 जून पर विशेष

विश्व पर्यावरण दिवस

पर्यावरण और सनातन संस्कृति में सतत - संपोष्य विकास की अवधारणा

आकांक्षा यादव
पोस्टमास्टर जनरल आवास नदेसर,
कैण्ट प्रधान डाकघर, वाराणसी

मनुष्य और पर्यावरण का संबंध काफी पुरानी और गहरा है। पर्यावरण के बिना जीवन ही संभव नहीं है। प्राचीन ग्रंथों में वर्णित पंच तत्व क्षिति, जल, पावक, गगन एवं समीर मिलकर पर्यावरण का निर्माण करते हैं। ये तत्व आवश्यकतानुसार समस्त जीव के उपयोग–उपभोग में अपनी भूमिका निभाते हैं। मानव अपनी आकांक्षाओं के लिए इन तत्वों पर निर्भर हैं। इनका एक निश्चित तारतम्य जीवन को नए प्रतिमान देता है, पर जब किन्हीं कारणों से इनका संतुलन बिगड़ता है तो पर्यावरण–संतुलन भी बिगड़ता है, जो अंततः न सिर्फ मानव बल्कि सभ्यताओं को प्रभावित करता है। ऐसे में जरूरत है कि इनका दोहन नहीं बल्कि सतत् विकास द्वारा सवंदेनशील उपयोग किया जाए। यही कारण है कि सनातन धर्म में जीव और पर्यावरण में अन्योन्याश्रित संबंध माना गया है। हमारे देवी–देवता भी पर्यावरण के बिना अधूरे हैं। धर्म और अध्यात्म जैव विविधता को संरक्षण देते हैं। पौराणिक ग्रंथों से लेकर महाकाव्यों तक में प्रकृति और पर्यावरण की महिमा गाई गई है। सनातन धर्म में पेड़–पौधे, पशु–पक्षी, प्रकृति की विभिन्न लीलाओं को इस रूप में प्रदर्शित किया गया है, ताकि उनके साथ सखा भाव उत्पन्न हो।

पर्यावरण के प्रति बढ़ती असंवेदनशीलता आज भयावह परिणाम उत्पन्न कर रही है। एक तरफ बढ़ती जनसंख्या, उस पर से प्रकृति का अनुचित दोहन, वाकई यह संक्रमणकालीन दौर है। यदि हम अभी भी नहीं चेते तो सभ्यताओं के अवसान में देरी नहीं लगेगी। वैश्विक स्तर पर देखें तो धरती का मात्र 31 प्रतिशत क्षेत्र वनों से आच्छादित है, जबकि 36 करोड़ एकड़ वन क्षेत्र प्रतिवर्ष घट रहा है। नतीजन 1141 प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा मंडरा रहा है। वहीं जंगलों पर निर्भर 1.6 अरब लोगों की आजीविका खतरे में है। बढ़ते पर्यावरण–प्रदूषण ने जल–थल–नभ किसी को भी नहीं छोड़ा है। पृथ्वी का तीन चौथाई हिस्सा जलमग्न है, जिसमें

करीब 0.3 फीसदी में से भी मात्र 30 फीसदी जल ही पीने योग्य बचा है। तभी तो 76.8 करोड़ लोगों को दुनिया में पीने के लिए साफ पानी तक नहीं मिलता। नतीजन, दुनिया में प्रतिवर्ष 18 लाख बच्चे पानी की कमी और बीमारियों के कारण दम तोड़ देते हैं। वहीं प्रतिवर्ष 22 लाख लोग जलजनित बीमारियां के चलते मौके के मुँह में समा जाते हैं। संयुक्त राष्ट्र के मुताबिक 2025 तक 2.9 अरब अतिरिक्त लोग जल आपूर्ति के संकट में इजाफा ही करेंगे। यदि भारतीय परिप्रेक्ष्य में बात करें तो जिस गंगा नदी को जीवनदायिनी माना जाता है, उसमें 1 अरब लीटर सीवेज मिलता है। ऐसे में स्वाभाविक है कि गंगा में बैक्टीरिया का स्तर 2800 गुना बढ़ गया है। इसी प्रकार यमुना नदी की बात करें तो अकेले राजधानी दिल्ली का 57 फीसदी कचरा यमुना में डाला जाता है। यहाँ 3053 मिलियन लीटर सीवेज पानी यमुना में हर रोज बहाया जाता है। कहना गलत न होगा कि 80 फीसदी यमुना दिल्ली में ही प्रदूषित होती है।

सिर्फ जल ही क्यों, जिस वायु में हम साँस लेते हैं, वह भी प्रदूषण से ग्रस्त है। दुनियाभर में युद्ध और आतंकवाद, एचआईवी–एड्स जैसी गंभीर बीमारियों, धूम्रपान या शराब के सेवन से जीवन को जितना खतरा है, उससे कई गुना खतरा वायु प्रदूषण से है। नजीर के तौर पर, स्मोकिंग से दुनियाभर में लोगों की औसत आयु करीब 1.8 साल घट जाती है। वहीं, शराब के सेवन से 7 महीना, खराब पानी से भी 7 महीना, एचआईवी एड्स से 4 महीना, मलेरिया से 3 महीना, युद्ध और आतंकवाद से सिर्फ 18 दिन जीवन प्रत्याशा घटती है। पिछले 5 सालों में वायु में 8–10 फीसदी कार्बन डाई आक्साइड की मात्रा बढ़ी है, नतीजन 5 करोड़ बच्चे हर समय वायु प्रदूषण से बीमार होते हैं। अकेले एशिया में 53 लाख लोग प्रदूषित वायु के चलते मौत के मुँह में चले जाते हैं। दुनिया की करीब 82 प्रतिशत आबादी यानी 6.3 अरब लोग ऐसे क्षेत्र में रहते हैं, जहां हवा की गुणवत्ता विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानकों से खराब है यानी प्रदूषित है। शिकागो यूनिवर्सिटी की ताजा एयर क्वॉलिटी लाइफ इंडेक्स रिपोर्ट में दावा किया गया है कि अगर भारत में वायु प्रदूषण का स्तर 2019 जैसा ही बना रहा तो लोगों की जीवन प्रत्याशा 5.9 साल कम हो जाएगी। दिल्ली, कोलकाता समेत गंगा के मैदानी इलाकों में प्रदूषण की वजह से देश की 40 प्रतिशत आबादी की उम्र तो 9 साल तक घट जाएगी। अगर भारत हवा की गुणवत्ता को विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानकों के अनुरूप करने में सफल होता है तो लोगों की औसत उम्र 5.9 साल बढ़ जाएगी।

एक तरफ बढ़ती जनसंख्या, दूसरी तरफ बढ़ता पर्यावरण–प्रदूषण ऐसे में उनके बीच परस्पर संतुलन की शीघ्र आवश्यकता है। मानव और पर्यावरण के मध्य असंतुलन से जहाँ अन्य जीव–जंतुओं व वनस्पतियों की प्रजातियाँ नष्ट होने के कगार पर हैं, वहीं ग्रीन हाउस के बढ़ते उत्सर्जन व ग्लोबल वार्मिंग से स्वच्छ साँस तक लेना मुश्किल हो गया है। मानवीय जीवन में बढ़ती भौतिकता एवं प्रकृति व पर्यावरण के प्रति बढ़ती उदासीनता, लापरवाही, बेपरवाही व दो.हन ने विनाश–लीला का तांडव आरंभ कर दिया है। पृथ्वी पर बढ़ते तापमान के चलते जलवायु–परिवर्तन भी हो रहा है। एक वैज्ञानिक रिपोर्ट के अनुसार–जलवायु परिवर्तन से हर वर्ष लगभग तीन लाख लोग मर रहे हैं, जिनमें से अधिकतर विकासशील देशों के हैं। ग्लोबल ह्यूमैनिटेरियन फोरम की एक रिपोर्ट के अनुसार–''1906 से 2005 के मध्यम पृथ्वी का तापमान 0.74 डिग्री सेल्सयिस बढ़ा है और हाल के वर्षों में इसमें उल्लेखनीय बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है। वर्ष 2100 तक यह तापमान न्यूनतम दो डिग्री सेल्सयिस बढ़ने के आसार हैं।''

संयुक्त राष्ट्र के मुताबिक 2030 तक वैश्विक ऊर्जा की जरूरत में 60 फीसदी की वृद्धि होगी। ऐसे में निर्वहनीय विक.ास के लिए तत्काल ध्यान दिए जाने की जरूरत है। प्राकृतिक संसाधनों के सम्यक प्रबंधन और इनका उचित इस्तेमाल करने को रिसाइकिल, रिड्यूस और रियूज का हमेशा ध्यान रखना होगा। कोयला और पेट्रोल के अधिकाधिक उपयोग से वायुमंडल में कार्बन डाई आक्साइड की मात्रा बढ़ रही है, जिससे पृथ्वी के औसत तापमान में भी वृद्धि हो रही है। वैज्ञानिकों का मानना है कि पृथ्वी पर संतुलित तापमान के लिए वायुमंडल में कार्बन डाई आक्साइड की मात्रा 0.3 फीसदी रहना जरूरी है। इसमें असंतुलन भयावह स्थिति पैदा कर सकता है। ओजोन परत जहाँ पराबैंगनी किरणों से धरा की रक्षा करता है, वहीं नित्–प्रतिदिन बढ़ते एयर कंडीशनर व रेफ्रीजरेटर एवं प्लास्टिक उद्योग में उपयोग किए जाने वाले क्लोरोफ्लोरो कार्बन के उत्सर्जन से ओजोन परत को नुकसान पहुँच रहा है। इससे जहाँ पराबैंगनी किरणों के प्रवाह के चलते त्वचा कैंसर जैसी बीमारियाँ उत्पन्न हो रही हैं, वहीं ग्लेशियरों के पिघलने के चलते तमाम दीपों व देशों पर खतरा मंडरा रहा है। आर्कटिक क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन पर प्रकाशित एक अध्ययन रिपोर्ट में दावा किया गया है कि आर्कटिक क्षेत्र में विश्व के अन्य भागों की अपेक्षा तापमान–वृद्धि दुगनी गति से हो रहा है। वस्तुतः आर्कटिक क्षेत्र में बर्फीली सतहें अधिक कारगर ढंग से सूर्य–उष्मा का परावर्तन करती हैं, पर अब तापमान बढ़ने एवं हिमखंडों के तीव्रता से पिघलने के कारण अनाच्छादित भूक्षेत्र व सागर तल द्वारा अपेक्षाकृत अधिक ऊष्मा ग्रहण की जा रही है, जिससे यह क्षेत्र अत्यंत तीव्र गति से गर्म होता जा रहा है। ऐसे में महासागरों का जलस्तर बढ़ने से तमाम द्वीपों व देशों के विलुप्त होने का खतरा उत्पन्न हो गया है। इससे जहाँ जनसंख्या पलायन की समस्या उत्पन्न हुई है, वहीं समुद्री जीव–जंतुओं के विलुप्त होने की संभावनाएं भी उत्पन्न हो गई हैं।

वस्तुतः जब हम पर्यावरण की बात करते हैं तो यह एक व्यापक शब्द है, जिसमें पेड़–पौधे, जल, नदियाँ, पहाड़ इत्यादि से लेकर हमारा समूचा परिवेश सम्मिलित है। मानव जीवन प्रकृति पर आश्रित है। प्रकृति एक विराट शरीर की तरह है। जीव–जन्तु, वृक्ष–वनस्पति, नदी–पहाड़ आदि उसके अंग–प्रत्यंग हैं। इनके परस्पर सहयोग से यह वृहद शरीर स्वस्थ और सन्तुलित है। जिस प्रकार मानव शरीर के किसी एक अंग में खराबी आ जाने से पूरे शरीर के कार्य में बाधा पड़ती है, उसी प्रकार प्रकृति के घटकों से छेड़छाड़ करने पर प्रकृति की व्यवस्था भी गड़बड़ा जाती है। हमारी हर गतिविधि इनसे प्रभावित होती है और इन्हें प्रभावित करती भी है। भारतीय मानस वृक्षों में देवताओं का वास मानता है। इतना ही

नहीं वह वृक्षों को देवशक्तियों के प्रतीक और स्वरूप के रूप में भी देखता, समझता है। भारतीय दर्शन यह मानता है कि इस शरीर की रचना पर्यावरण के महत्त्वपूर्ण घटकों– पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश से ही हुई है। समुद्र मंथन से वृक्ष जाति के प्रतिनिधि के रूप में कल्पवृक्ष का निकलना, देवताओं द्वारा उसे अपने संरक्षण में लेना, इसी तरह कामधेनु और ऐरावत हाथी का संरक्षण इसके उदाहरण हैं। कृष्ण की गोवर्धन पर्वत की पूजा की शुरुआत का लौकिक पक्ष यही है कि जन सामान्य मिट्टी, पर्वत, वृक्ष एवं वनस्पति का आदर करना सीखें। पीपल के वृक्ष में त्रिदेव यानी ब्रह्मा, विष्णु व शिव का वास तो आंवले के पेड़ में लक्ष्मीनारायण के विराजमान होने की परिकल्पना की गई है। इसके पीछे वृक्षों को संरक्षित रखने की भावना निहित है।

पर्यावरण सुरक्षा की जिम्मेदारी सिर्फ सरकार और स्वयंसेवी संस्थाओं की ही नहीं है, बल्कि इसकी शुरुआत हम स्वयं से या अपने परिवार और कार्यस्थल से कर सकते हैं। 'यूज एंड थ्रो' की पाश्चात्य अवधारणा को छोड़ सनातन संस्कृति की 'पुनः सहेजने' वाली प्रवृत्ति से जुड़ाव की जरुरत है। जैव–विविधता के संरक्षण एवं प्रकृति के प्रति अनुराग पैदा करने हेतु फूलों को तोड़कर उपहार में बुके देने की बजाय गमले में लगे पौधे भेंट किये जाएँ। स्कूल में बच्चों को पुरस्कार के रूप में पौधे देकर, उनके अन्दर बचपन से ही पर्यावरण संरक्षण का बोध कराया जा सकता है। इसी प्रकार सूखे वृक्षों को तभी काटा जाय, जब उनकी जगह कम से कम दो नए पौधे लगाने का प्रण लिया जाय। जीवन के यादगार दिनों मसलन– जन्मदिन, वैवाहिक वर्षगाँठ या अन्य किसी शुभ कार्य की स्मृतियों को सहेजने के लिए पौधे लगाकर उनका पोषण करना चाहिए, ताकि सतत–संपोष्य विकास की अवधारणा निरंतर फलती–फूलती रहे। पर्यावरण को सुरक्षित रखने हेतु आज के उपभोक्तावादी जीवन में इको–फ्रेंडली होना बेहद जरूरी है। वर्षा जल–संचयन प्रणाली, जैविक–खाद्य, पॉलिथिन व प्लास्टिक का उपयोग बंद, कार पूल या सार्वजनिक वाहन प्रणाली का प्रयोग, सूरज की रोशनी में अधिकाधिक काम, सौर ऊर्जा का उपयोग, ऊर्जा बचाने हेतु एसी का सीमित उपयोग, सी.एफ.एल. का उपयोग, फोन, मोबाइल, लैपटश्वप आदि का 'पश्ववर सेविंग मोड' पर इस्तेमाल, कूड़ा करकट, सूखे पत्ते, फसलों के अवशेष और अपशिष्ट जलाने से परहेज, री–सायकलिंग द्वारा पानी की बर्बादी रोककर टश्वयलेट इत्यादि में उपयोग, जैसे तमाम कदम उठाकर पर्यावरण संरक्षण में अहम योगदान दिया जा सकता है।

आधुनिक वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के परिप्रेक्ष्य में मानव और पर्यावरण के मध्य संबंधों में महती परिवर्तन हुआ है। वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास ने मानव को अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप पर्यावरण को आकार देने के उद्देश्य से अप्रत्याशित अवसरों को जन्म दिया है। यदि इन अवसरों को नियंत्रित ढंग से उपयोग नहीं किया गया तो अनेक गम्भीर समस्याएँ उत्पन्न होंगी। सनातन संस्कृति में इन सबसे बचाव हेतु पहले से ही प्रकृति और पर्यावरण के प्रति प्रेम भाव को सन्निहित किया गया है। मानव को यह नहीं भूलना चाहिए कि हम कितना भी विकास कर लें, पर पर्यावरण

की सुरक्षा को नजरअंदाज कर किया गया कोई भी कार्य समूची मानवता को खतरे में डाल सकता है। अगर दुनिया भर में प्राकृतिक संसाधनों का सोच–समझकर और सम्भलकर उपयोग नहीं किया गया, तो धरती लोगों की जरूरतों को पूरा नहीं कर पाएगी। देश, धर्म और जाति की दीवारों से परे यह ऐसा मुद्दा है जिस पर पूरी दुनिया के लोगों को एक साथ खड़ा होना होगा। पर्यावरण संरक्षण सिर्फ भाषणों, फिल्मों, किताबों और लेखों से ही नहीं हो सकता, बल्कि हर मनुष्य को धरती के प्रति अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी, तभी कुछ सकारात्मक प्रभाव नजर आ सकेगा। अतः जरूरत है कि अभी से प्रकृति व पर्यावरण के संरक्षण के प्रति सचेत हुआ जाए और इसे समृद्ध करने की दिशा में तत्पर हुआ जाय।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

स्वार्थी न बनें संनिष्ठ रहें

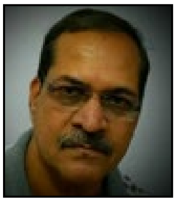

डॉ. प्रदीप उपाध्याय
देवास मध्य प्रदेश

अब हर कोई निष्ठा परखने लगा है। लोगों की निष्ठा संदिग्ध होने लगी है। आजकल निष्ठा बदलते देर नहीं हो रही है। निष्ठा परखी जा रही है। निष्ठा का दिखावा किया जा रहा है।यह कैसी निष्ठा है जो अवसर देखकर बदल जाए।आज आप किसी के होने का दावा करते हैं और नजर पलटते ही किसी और के हो जाते हैं!

व्यक्ति इतना स्वार्थी हो गया है कि चंद रूपयों की खातिर अपना मत,अपना पंथ अपना सम्प्रदाय तक बदल देता है जबकि धर्म व्यक्ति को जन्म से मिलता है, यह आध्यात्मिक शक्ति है।भला इसमें परिवर्तन कैसा। व्यक्ति अपने धर्म के प्रति ही संनिष्ठ नहीं रह पाता है तब उससे सदाचार की उम्मीद कैसे की जा सकती है।इसी तरह से जो व्यक्ति किसी दल का सच्चा सिपाही होने का दावा करता है, टिकट न मिलने पर पार्टी से दगा कर किसी और की टोपी धारण कर लेता है। जहां सात जन्मों तक साथ निभाने का वचन दिया जाता है वहीं पत्नी या पति अपने प्रेमी या प्रेमिका के साथ भाग निकलते हैं।ऐसा अरेंज्ड मैरिज में ही नहीं होता बल्कि प्रेम विवाह में भी बहुतायत से होने लगा है।इसी प्रकार से मंत्री–संत्री देश, संविधान या आम जन के प्रति समर्पित न होकर स्वयं की हित साधना में रत रहने लगे हैं।

जहां लोकहित में कर्तव्य पालन की अपेक्षा की जाती है,जिस बात की संविधान और नियमों के तहत शपथ ली जाती है, वहीं बिना रिश्वत, बिना भ्रष्टाचार के कोई काम नहीं किया जा रहा है।तब प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि व्यक्ति की निष्ठा किसके प्रति रहती है। क्या वह स्वयं के प्रति संनिष्ठ नहीं हो गया है। संनिष्ठा के भाव में ईमानदारी, समर्पण, विश्वास के स्थान पर स्वार्थ, बेईमानी, अविश्वास का मनोभाव उत्पन्न होने लगा है! लेकिन ऐसा क्यों हो रहा है। व्यक्तिगत सम्बन्धों से लेकर शासन –प्रशासन, राजनीतिक क्षेत्र , सामाजिक ताने–बाने

, आर्थिक क्षेत्र, धार्मिक आस्थाओं में यानी हरेक जगह व्यक्ति की संनिष्ठा पर ऊंगली उठने लगी है।

आखिर निष्ठा है क्या! सामान्य रूप से कहें तो निष्ठा वह कर्तव्य है जिसमें एक व्यक्ति या नागरिक से व्यापक रूप से अपेक्षा की जाती है कि वह उस राज्य या व्यक्ति के प्रति उत्तरदायी हो जिससे वह संबंधित है। निष्ठा वफादार या वफादार होने का गुण है। इसमें व्यक्ति से कर्म,भाव और वचन पालन की अपेक्षा सन्निहित रहती है।निष्ठा लैटिन शब्द फाइड्स से संबंधित है, जिसका अर्थ है विश्वास, इसलिए निष्ठा विश्वासयोग्य होने की अवस्था है। विवाह सम्बन्धों के दायरे में देखें तो निष्ठा अपने जीवनसाथी के प्रति परस्पर वफादारी है। यदि कोई व्यक्ति एक पत्रकार है, तो उसकी रिपोर्टिंग में तथ्यों के प्रति निष्ठा होनी चाहिए। किसी धर्म या समूह का अपनी आस्थाओं और विश्वास के प्रति समर्पण, किसी शासकीय सेवक से अपने करने योग्य कार्य एवं कर्तव्य पालन की अपेक्षा निष्ठा है। कर्तव्य पालन के प्रति अशेष अनुराग एवं निष्ठा ही कर्तव्यपरायणता कहलाता है, इनमें दुराग्रह का भाव शामिल नहीं है। संनिष्ठा का भाव लोककल्याण के लिए आग्रह है।

राजकीय कार्यों में निष्ठा की शपथ एक शपथ है जिसके द्वारा एक प्रजा या नागरिक निष्ठा के कर्तव्य को स्वीकार करता है और राजशाही में सम्राट या राजा के प्रति या फिर देश के प्रति वफादारी की शपथ लेता है। जबकि लोकतांत्रिक व्यवस्था में, आधुनिक गणराज्यों में, शपथ सामान्य रूप से देश या देश के संविधान के प्रति निष्ठा की शपथ के रूप में होती है। हमारे देश में भी निष्ठा की शपथ इस तरह से दिलाई जाती है– 'मैं, ३, सत्यनिष्ठा से पुष्टि (या शपथ) करता हूं कि मैं कानून द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची आस्था और निष्ठा रखूंगा, और यह कि मैं भारत के कानूनों का ईमानदारी से पालन करूंगा और भारत के नागरिक के रूप में अपने कर्तव्यों को पूरा करूंगा।'

संयुक्त राज्य अमेरिका में निष्ठा की शपथ एक तरह की शपथ घोषणा है जिसके द्वारा प्रत्येक नागरिकता आवेदक को एक औपचारिक समारोह के दौरान एक प्राकृतिक अमेरिकी नागरिक बनने के लिए शपथ पढ़ना होती है।यह शपथ समारोह की परम्परा 18वीं सदी से चली आ रही है।शपथ लेते समय, नया नागरिक निम्नलिखित कर्तव्यों को पूरा करने का वादा करता है जिसमें अपने दुश्मनों के खिलाफ अमेरिकी संविधान और संयुक्त राज्य अमेरिका के कानूनों का समर्थन और बचाव करने की घोषणा रहती है। इसमें यह भी सम्मिलित है कि किसी अन्य राष्ट्र या संप्रभु के प्रति निष्ठा को छोड़ना, और वंशानुगत या महान उपाधियों का त्याग करना, यदि कोई हो।

सरकार द्वारा ऐसा करने के लिए बुलाए जाने पर सैन्य या नागरिक सेवा प्रदान करने की भी शपथ लेना होती है। वहां निष्ठा की शपथ समारोह में भाग लेना प्राकृतिककरण प्रक्रिया के अंतिम चरण के रूप में अनिवार्य है। स्वाभाविक रूप से अमेरिकी नागरिकता प्राप्त करने और बनने के लिए अमेरिकी नागरिकता की इस आवश्यकता को पूरा करना अनिवार्य है ।

इस प्रकार से हरेक देश के अपने नियम हैं, कानूनी प्रावधान हैं, विधिक प्रक्रिया है जिसके तहत देश के नागरिक विधिक रूप से संनिष्ठा व्यक्त करते हैं। वास्तव में देखा जाए तो निष्ठा की शपथ एक महत्वपूर्ण औपचारिक संकेत है जो शासन–प्रशासन में किसी के कार्यकाल की आधिकारिक शुरुआत को दर्शाता है। महत्वपूर्ण रूप से, यह पदीय दायित्वों और कर्तव्यों के निर्वहन हेतु विधिक द्वारा स्थापित अधिकारों और शक्तियों के समुचित प्रयोग के लिए मान्य अवस्था के रूप में स्वीकारणीय है।यह स्थिति उसे सार्वजनिक पद संभालने से जुड़े कर्तव्यों, जिम्मेदारियों और दायित्वों के प्रति सार्वजनिक प्रतिब)ता का बोध भी कराती है।

वैसे देखा जाए तो व्यक्ति का अपने अधिकार और कर्तव्य पालन की सामाजिक रूप से परस्पर नैतिक बाध्यताएं ही संनिष्ठा है। व्यक्तिगत रूप से या फिर सार्वजनिक रूप से व्यक्ति अपने अधिकार और कर्तव्य पालन में कितना ईमानदार रह पाता है यह इस बात पर निर्भर करता है कि वह इनका उपयोग स्वहित के लिए करता है या रूढ़ियों, परम्पराओं, नियमों द्वारा स्थापित व्यवस्था के अनुसार या अनुरूप चलने का प्रयास करता है।देखा यह भी जाना चाहिए कि व्यक्ति की निष्ठा स्वयं के प्रति है या समाज और राज्य के प्रति है। आज के दौर में दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यही है कि व्यक्ति व्यक्तिनिष्ठ हो गया है।उसकी निष्ठा स्वयं के प्रति है। और इसीलिए समाज में सर्वत्र दुरावस्था व्याप्त होती जा रही है। यदि सम्यक रूप से हरेक व्यक्ति स्वयं के प्रति निष्ठा न रखकर परिवार के प्रति, समाज के प्रति, धर्म के प्रति राज्य के प्रति पूर्ण समर्पण भाव से संनिष्ठा रखे तो यकीनन सर्वत्र खुशहाली व्याप्त होने में समय नहीं लगेगा। ■

> **सफलता पाने के लिए प्रत्येक दिन आपको अपने लक्ष्य के थोड़ा नजदीक आना चाहिए और इसके लिए आपको अपने आप को बेहतर बनाने के हर एक अवसर को उपयोग करना चाहिए।**

स्थायी स्तम्भ

मन पर नियंत्रण पौराणिक ग्रंथों के संदर्भ में

डॉ. अलका शर्मा
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
सह संपादक योग संस्कृति
उत्थान पीठ पत्रिका

पिछले अंक में ——

जीवन मे चतुर्दिक उन्नति व सफलता चित्त की एकाग्रता पर निर्भर करती हैऔर चित्त तभी एकाग्र होगा । जब मनुष्य का अपने मन पर नियंत्रण होगा। अर्जुन ने श्री कृष्ण को जब बताया – कि मैं अपने मन पर नियंत्रण करना उतना ही दुष्कर मानता हूं जितना कि वायु को मुठ्ठी में बंद करना दुष्कर है। तब श्री कृण ने कहा हे अर्जुन –अभ्यास एवं वैराग्य से मन को वश में किया जा सकता है।

योग शास्त्र , वेद, उपनिषद गीता आदि ग्रंथो में मन के नियन्त्रण पर विशेष बल दिया है। मानव शरीरमें सभी ज्ञानेन्द्रियों व कर्मेन्द्रियों का अपना अपना विशेष महत्व है । परन्तु मन का स्थान सर्वोपरि है।संसार मे जो भी सुख दु:ख , शोक विषाद, ग्लानि, ईर्ष्या, प्रसन्नता, सेवा, क्रोध, भय, घृणा, लालच, प्रेम, श्रद्धा, सेवा, बन्धन या विरक्ति आदि का जीव अनुभव करता है। उसका मुख्य प्रेरक हमारा मन है। इसी कारण हमारे ऋषि मुनियों ने शरीर को स्वस्थ रखने व मन पर संयम व इच्छाशक्ति को प्रबल बनाने के लिए एक उत्कृष्ट प्रणाली को विकसित किया जिसे 'योग' कहते है इस योग को आज विश्व पटल पर अद्‌भुत सम्मान मिला है।

योग द्वारा व्यक्ति अपने मन व शरीर मे समन्वय स्थापित करके अपने भीतर के चौतन्य को जान पाने में सक्षम होता है। क्योंकि सांसारिक उलझनों से जूझते मानव को अपने भीतर झांकने का समय ही नही मिल पाता है। इसी कारण तनावपूर्ण जीवन जीने को मजबूर प्राणी अपनी शक्ति को प्रतिदिन खर्च तो करता है, लेकिन अपनी ऊर्जा के संचय व शक्ति के पुन. र्निर्माण की कला से सर्वथा अनभिज्ञ रहता है ।

आज हर मानव प्रतिदिन की भागदौड़ व जीवन की आपाधापी में अर्थोपार्जन को ही प्राथमिकता देकर अपनी मानसिक शांति खो रहा है। इस अशांति का सीधा असर उसके

परिवार, कैरियर व अन्य संबंधों पर भी पड़ता है।

मेरा आज का लेख एक ओर युवावर्ग को मन पर नियंत्रण द्वारा उत्तम चरित्र, चित्त की एकाग्रता प्राप्त करके सर्वत्र सफलता प्राप्त करने में सहायक होगा दूसरी ओर 'ध्यान' महानगरों की व्यस्त दिनचर्या से त्रस्त, थकान, टेंशन डिप्रेशन आदि से मुक्त कर स्वस्थ तन व मन प्राप्त कराने में निश्चित रूप से सहायक होगा।।

कठोपनिषद में मानव शरीर को स्पष्ट करने, मन को नियंत्रित करने के लिए एक सुंदर दृष्टांत देकर बताया गया है–

1– आत्मनम रथिनम विद्धि शरीरम स्थमेव च।

बुद्धि तु सारथिम विद्धि,मनः प्रग्रहमेव च।।

अर्थात प्रत्येक व्यक्ति भौतिक शरीर रूपी रथ पर आरूढ़ है। बुद्धि सारथि है, मन लगाम है इन्द्रियां घोड़े है। इस प्रकार मन व इंद्रियों को संगति में आत्मा दुःख या सुख का अनुभव करता है।

हमारे जीवन मे जो भी घटित होता है उसका मुख्य कारण हमारा मन ही है मन इतना चंचल व हठी है बुद्धि से इसको नियंत्रित करना दुष्कर हो जाता है। क्योंकि प्रति पल मन विषयो की ओर दौड़ता है। सुख व सफलता चाहने वाले सभी मनुष्यों के लिए मन पर नियंत्रण परम आवश्यक है। जो केवल और केवल अभ्यास व वैराग्य से ही संभव हो सकता है ।

पतंजलि ने योगसूत्र में भी अभ्यास के विषय मे बताया है ।

अभ्यास वैराग्यभ्याम तन्निरोधः।। (समाधिपाद)

अपनी इंद्रियों को अंतर्मुखी करके निरंतर एक विचार या के उच्चारण पर अपने मन को केंद्रित करना चित्त की एकाग्रता बढ़ाना ही ध्यान अभ्यास है।

अब संसारिक व्यक्तियों के समक्ष यही प्रश्नचिन्ह खड़ा होता है कि ध्यान क्या है कैसे किया जाए। गीता में इसे विस्तार से बताते हुए श्री कृष्ण कहते है

२– यथा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।। (गीता 2/48)

सर्वप्रथम मनुष्य को विषयो की ओर दौड़ते मन को वैसे ही नियंत्रित करना चाहिए जैसे कि कछुआ अपने सारे अंगों को अपने खोल में समेट लेता है तभी वह स्थिरप्रज्ञ हो सकता है।

जब बाह्य जगत से चित्तवृत्ति का निवारण करके परमात्मा की ओर मन को एकाग्र करना ही ध्यान है।

3. यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता।

योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः।। (गीता 6/9)

वायु रहित स्थान पर रखे निष्कम्प दीपक के समान ही परमात्मा के ध्यान में लगे योगी की चित्तवृत्ति होती है।

बाह्य नश्वर वस्तुओं के प्रति अति आकर्षण उन्हों पाने के लिए प्रतिपल संघर्ष रत रहना, न मिलने पर क्रोध या क्षोभ होना इन सभी से अपनी चित्तवृत्तियों को रोकना ,उनको नियंत्रित करना ही अभ्यास है। मन अत्यंत वेगवान होने के कारण साधारण व्यक्ति

के वश में नही आता मन बहुत ही चंचल व चलायमान है उदाहरण के लिए यदि हम विदेश में बैठे किसी रिश्तेदार, बंधु से बात करना चाहे तो फोन मिलाने में कुछ सैकिंड अवश्य लगेंगे परन्तु हमारा मन पलक झपकते ही वहां पर पहुंच जाता है इसी कारण यजुर्वेद में मन के विषय मे बताया गया है–

यदज्जाग्रतो दूरमुदेति देवं तदुसुप्तस्य तथैवेति।

(यजुर्वेद 38/1)

जाग्रत व सुप्तावस्था में देखे सुने दूर दूर के स्थानों की दौड़ लगाने वाले इस वेगवान मन को नियंत्रित करना परम आवश्यक है। मन के विकृत होने पर व्यक्ति का पतन निश्चित है।

वर्तमान परिपेक्ष्य में यदि सभी युवावर्ग इस विषय को गंभीरता से ले और पवित्र व शुद्ध मन से अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हो तो दुनिया की कोई ताकत उनको लक्ष्य प्राप्ति से नही रोक सकती। सारी सफलताएं स्वयं उनके कदम चूमेगी। जीवन मे उनका उत्थान निश्चित है। रहीम ने भी कितना सुंदर वृक्ष का दृष्टांत देकर समझाया है –

एक साधे सब सधे सब साधे सब जाई ।
रहिमन सींचि मूल को फूले फले अघाई ।।

वास्तव में वृक्ष का दृष्टांत हमारे मानव जीवन पर बहुत सटीक बैठता है क्योंकि पेड़ की पत्तियों और तने को न सींच कर केवल उसके मूल जड़ को ही पानी देना चाहिए तभी वृख फूलता व फलता है ।

ठीक उसी प्रकार यदि हम जीवन मे सफलता, धन वैभव यश श्री ,कीर्ति उत्तम स्वास्थ्य, चाहते है तो केवल ओर केवल हमे अपने मन पर नियंत्रण करना होगा। ठीक वैसे ही जैसे हम सधे हाथों सेअपनी कार का स्टीयरिंग संभालकर अपने गंतव्य स्थान तक पहुँच जाते है।

वैसे ही उन्नति के शिखर पर पहुँचने के लिए मन को नियंत्रित करना होगा द्य अपना उच्च मनोबल बनाये रखकर जीवन में सदा. चार को प्राथमिकता देनी होगी जीवन मे सत्कार्य करने होंगे।

वेदों में–

स्वगर्रूपन्था सुकृते देवयानः

स्वर्ग की ओर ले जाने देवयान हमारे सत्कर्मो को ही बताया है ओर सत्कर्म हम तभी करेंगे जब हमारा मन पर नियंत्रण होगा।

अपने मन को भटकाव से बचाने के लिए वेदों में स्पष्टतः प्रार्थना द्वारा कहा गया है–

अग्ने नय सुपथा ।।

जीवन मे बड़े बड़े शासकों की जय –पराजय का मुख्य कारण उनका उच्च मनोबल व मन पर नियंत्रण ही रहा है। अतः जीवन में सभी सभी प्रकार को सफलताओं का मूलमंत्र मन पर नियंत्रण ही है इसी लिए कहा गया है

मन के हारे हार है ।
मन के जीते जीत।

मित्रता के दोहे

प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे
प्राचार्य
शासकीय जेएमसी महिला महाविद्यालय
मंडला (म.प्र.)

नेहिल होती मित्रता, होती सदा पवित्र।
दुख में कर ना छोड़ता, हो यदि सच्चा मित्र ।।

वही मित्र है ख़ास जो, कह दे चोखी बात।
रहे संग वह नित मगर, बनकर के सौगात।।

कृष्ण–सुदामा से सखा, नहीं मिलेंगे और।
ऐसा ही चलता रहे, सख्य भाव का दौर।।

पावनता का तेज हो, निश्छल हों सम्बंध।
बनें सखा मजबूत कर, अनुपम यह सम्बंध।।

अंतर्मन था निष्कलुष, गहन चेतना भाव।
अमर बने तब मैत्री, होगा नहीं अभाव।।

कृष्ण–सुदामा मैत्री, ने पाया सम्मान।
पनपे ना कोई कपट, केवल मंगलगान।।

एक देव था, एक नर, पर थे चोखे यार।
सख्य भाव देता सदा, हर युग में उजियार।।

ऊँचनीच को भूलकर, बनना चोखे यार।
तब ही यह रिश्ता बने, आजीवन उपहार।।

मित्र करे गल्ती अगर, बतला देना भूल।
पर तजकर के साथ तुम, नहीं चुभाना शूल।।

रखना हित का भाव नित, रखना उर में प्रीत।
जय होगी तब मित्रता, जय हो ऐसी रीत।।

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन की जिला बिलासपुर इकाई को शहीद वीर नारायण सिंह तिरंगा अवार्ड से सम्मानित किया गया

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउंडेशन की जिला बिलासपुर इकाई के स्थापना दिवस 2 जून 2022 को सेल्यूट तिरंगा शहीद वीर नारायण सिंह तिरंगा अवार्ड से सम्मानित किया गया। जीएसएस फाउंडेशन को सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक कार्यों के लिए विशेष अतिथि नायक दीपचंद (कारगिल योद्धा) मंगेश नायक (26/11 आतंकी हमले) मधुसूदन सुर्वे जैसे महान देशभक्त कि उपस्थिति में गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन के मंडल अध्यक्ष (छत्तीसगढ़ प्रदेश) डॉ. अलका यतींद्र यादव, 2023 नई कार्यकारिणी सदस्यों के साथ जिला अध्यक्ष मोना केंवट, उपाध्यक्ष मांडवी नामदेव, सचिव प्रियंका सिंह समीक्षा नायडू, उषा सोनी, अनामिका वस्त्रकार, अदिति सैनी, पूजा यादव, किरण साहू, असिता यादव, अंजनी लुनिया, मान्या सिंह, रेखा यादव, सोनती पटेल, वर्षा यादव आदि ने सम्मान समारोह में अपनी उपस्थिति दी।

18 जून पर विशेष

अंतर्राष्ट्रीय पिता दिवस

पिता एक रिश्ता है तो जिम्मेदारी का नाम भी

कृष्ण कुमार यादव
भारतीय डाक सेवा,
पोस्टमास्टर जनरल, वाराणसी परिक्षेत्र
वाराणसी, उत्तर प्रदेश

माँ और पिता ये दोनों ही रिश्ते समाज में सर्वोपरि हैं। इन रिश्तों का कोई मोल नहीं है। ये सिर्फ एक शब्द भर नहीं हैं, बल्कि ऐसे रिश्ते हैं जिनके बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। दुनिया के तमाम देशों में इन रिश्तों के लिए अलग–अलग शब्द हो सकते है, पर भाव–पक्ष में साम्यता है। भारतीय संस्कृति में माता–पिता को देवता कहा गया है–मातृदेवो भव, पितृदेवो भव। भगवान गणेश माता–पिता की परिक्रमा करके ही प्रथम पूज्य हो गये। श्रवण कुमार ने माता–पिता की सेवा में अपने कष्टों की जरा भी परवाह न की और अंत में सेवा करते हुए प्राण त्याग दिये। देवव्रत भीष्म ने पिता की खुशी के लिए आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया और विश्वप्रसिद्ध हो गये। माता–पिता की सेवा के तमाम् दृष्टान्त हैं जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता। जो बच्चे अपने माता–पिता का आदर–सम्मान नहीं करते, वे जीवन में अपने लक्ष्य को कभी प्राप्त नहीं कर सकते।

फिलहाल यहाँ बात पिता की। भले ही पिता एक मां की तरह अपने कोख से बच्चे को जन्म न दे पाए, अपना दूध न पिला पाए, लेकिन सच तो यह है कि एक बच्चे के जीवन में पिता का सबसे महत्वपूर्ण स्थान होता है। हम सभी को बचपन में अनुशासनप्रियता व सख्ती के चलते पिता क्रूर नजर आते हैं। लेकिन जैसे–जैसे उम्र बढ़ती है और हम जीवन की कठिन डगर पर चलने की तैयारी करने लगते हैं, हमें अनुभव होता है कि पिता की वो डाँट

और सख्ती हमारे भले के लिए ही थी। पापा बाहर से जितने सख्त दिखाई पड़ते हैं, अंदर से उतने ही कोमल हैं। वज्रादपि कठोर, बिल्कुल नारियल की तरह। उनकी हर एक सीख जब हमें अपनी मंजिल की ओर बढ़ने में मदद करती है, तब हमें मालूम पड़ता है कि पिता हमारे लिए कितने खास थे और हैं। कहते भी हैं कि माँ का प्यार नजर आता है पर पिता का प्यार नजर नहीं आता है क्योंकि पिता का प्यार इतना गहरा होता है कि उस प्यार को देखने के लिए नजरों की जरूरत नहीं होती है केवल दिल से ही पिता के प्यार को महसूस किया जा सकता है।

जिस घर में बच्चों की देखरेख करने के लिए अगर पिता नहीं है तो उन मासूम बच्चों के सारे लाड़-प्यार, दुलार, पिता की छांव सबकुछ अधूरा रह जाता है। ऐसा कहा जाता है कि अगर किसी के घर में मां नहीं है तो बच्चों की देखरेख ठीक से नहीं हो पाती। ठीक उसी तरह पिता के न होने पर भी बच्चों का वही हाल होता है। याद कीजिए बचपन के वो दिन जब मां बड़े प्यार से आपके सिर पर हाथ फेरकर आप से प्यार करने का अहसास कराती होंगी पर आपके पिता बस आपकी तरफ देखकर केवल यही पूछते होंगे कि, "मेरे बेटे को किसी चीज की जरूरत तो नहीं है न।" सोचिए जरा पिता का यह सब पूछना, उनकी बातों और आंखों में कितना प्यार दिखाता है पर पिता कभी भी अपना प्यार जता नहीं पाता है। इस दुनिया जहान में बिना पिता के जीवनयापन करना बहुत मुश्किलों भरा काम है। बच्चों को हर उस जरूरत के लिए तरसना पड़ता है, जिसके वे हकदार होते हैं।

बचपन में जब कोई बच्चा चलना सीखता है तो सबसे पहले अपने पिता की उँगली थामता है। नन्हा सा बच्चा पिता की उँगली थामे और उसकी बाँहों में रहकर बहुत सुकून पाता है। बोलने के साथ ही बच्चे जिद करना शुरू कर देते हैं और पिता उनकी सभी जिदों को पूरा करते हैं। बचपन में चॉकलेट, खिलौने दिलाने से लेकर युवा होने तक बाइक, कार, लैपटॉप और उच्च शिक्षा के लिए विदेश भेजने तक सभी माँगों को पिता पूरा करते रहते हैं। कई बार तो ऐसा भी होता है कि अपनी जरूरतों को कम करके एवं अपनी अभिरुचियों को तिलांजलि देकर भी बच्चों के लिए पिता दिन-रात मेहनत करते हैं। अगर घर में पिता होते है तो तमाम जिम्मेदारियों से बच्चों को काफी हद तक मुक्ति मिल जाती है। फिर उन पर किसी तरह का कोई अतिरिक्त दबाव नहीं रहता। वो अपनी मर्जी से घूम-फिर सकते हैं। अपने दोस्तों के साथ पार्टियों में शामिल हो सकते हैं और सारी दुनिया की फिक्र छोड़कर पिता के गोद में सिर रखकर आराम से सो सकते हैं।

पिता की उपस्थिति ही हमें काफी सुकून और आश्वस्ति देती है। हमें पिता से मिलता है एक सुरक्षा का वादा, एक प्यार का एहसास, जो बिना किसी शर्त से बंधा है। यह उम्मीद भी कि वो हमें कभी नहीं नकारेंगे। हमारी हर खुशी व हर जीत में ही नहीं बल्कि सबसे बुरे वक्त में भी संबल बनकर खड़े रहेंगे। पिता के लिए हमारी और परिवार की खुशी सर्वोपरि है, उनकी खुद की खुशी से भी ज्यादा। आज भी बचपन के वो दिन याद हैं कि कैसे हर साल पिताजी अपने कांधे पर बिठाकर रावण दहन दिखाने के

लिए ले जाया करते थे। कितने सुनहरे दिन थे, जब पिताजी उंगली पकड़कर मेला घुमाया करते थे और हर जिद बड़ी आसानी से पूरी कर दिया करते थे। उनसे हम अपने दिल की हर छोटी बात भी बिना किसी हिचकिचाहट के साथ बाँट सकते थे।

जब बच्चे छोटे होते हैं तो उनसे अधिकतर यह पूछा जाता है कि उन्हें ज्यादा प्यार कौन करता है मम्मी या पापा तो अधिकांश बच्चे माँ का नाम ही लेते हैं। वो इसलिए क्योंकि वे माँ के साथ ही ज्यादा समय व्यतीत करते हैं और उन्हें पता ही नहीं होता है कि पिता का प्यार क्या होता है। कुछ बच्चे ऐसे होते हैं जो माता-पिता दोनों के साथ एक जैसा समय व्यतीत करते हैं और उनसे पूछे जाने पर वो बच्चे यही कहते हैं कि पिता ज्यादा प्यार करते हैं और साथ ही उन बच्चों को ज्यादा खुश देखा गया जो पिता के साथ ज्यादा समय व्यतीत करते हैं।

एक शोध के मुताबिक आज भी दुनिया भर में बच्चे सर्वप्रथम आदर्श के रूप में अपने पिता को ही देखते हैं। माँ उनकी पहली पाठशाला है तो पिता पहला आदर्श। वे अपने पिता से ही सीखते हैं और उनके जैसा ही बनना चाहते हैं। इसलिए जीवन में जितना मां का महत्व होता है, उतना ही पिता का भी है। हमें यह नही भूलना चाहिए कि माता-पिता ने हमारे पालन-पोषण में कितने कष्ट सहे

हैं। भूलकर भी कभी अपने माता–पिता का तिरस्कार नहीं करना चाहिए। वे हमारे लिए सदैव आदरणीय हैं। उनका मान–सम्मान करना हमारा पुनीत कर्तव्य है।

पिता एक रिश्ता है तो जिम्मेदारी का भी नाम है। अपने बड़े होते बच्चों की परवरिश के साथ–साथ उनके सुनहले भविष्य के लिए भी पिता सदैव सजग रहता है। इन सबके पीछे एक सुखद अहसास छिपा होता है कि बड़े होकर बच्चे उनका ध्यान रखेंगे और फिर वे अपने अधूरे अपने सपने जी सकेंगे। पर कई बार ये सपने अधूरे ही रह जाते हैं और फिर शुरु होता है वह दौर, जब भागदौड़ भरी इस जिंदगी में बच्चों के पास अपने पिता के लिए समय नहीं मिल पाता है। पाश्चात्य देशों में इसी को ध्यान में रखकर 'फादर्स डे' या 'पितृ दिवस' मनाने की परंपरा का आरम्भ हुआ।

'फादर्स डे' पिताओं के सम्मान में एक व्यापक रूप से मनाया जाने वाला पर्व है, जिसमें पितृत्व, पितृत्व–बंधन तथा समाज में पिताओं के प्रभाव को समारोह पूर्वक मनाया जाता है। इस दिवस की शुरुआत बीसवीं सदी के प्रारंभ में पिता धर्म तथा पुरुषों द्वारा परवरिश का सम्मान करने के लिये मातृ दिवस के पूरक उत्सव के रूप में हुई। यह हमारे पूर्वजों की स्मृति और उनके सम्मान में भी मनाया जाता है। पितृ दिवस को विश्व में विभिन तारीखों पर मनाते है– जिसमें उपहार देना, पिता के लिये विशेष भोज एवं पारिवारिक गतिविधियाँ शामिल हैं। विश्व के अधिकतर देशों में इसे जून के तीसरे रविवार को मनाया जाता है। कुछ देशों में यह अलग–अलग दिनों में मनाया जाता है।

फादर्स डे मनाने के पीछे भी कई दिलचस्प किस्से हैं । एक मान्यता के अनुसार वास्तव में यह सबसे पहले पश्चिम वर्जीनिया के फेयरमोंट में 5 जुलाई, 1908 को मनाया गया था। 6 दिसम्बर, 1907 को मोनोंगाह, पश्चिम वर्जीनिया में एक खान दुर्घटना में मारे गए 210 पिताओं के सम्मान में इस विशेष दिवस का आयोजन श्रीमती ग्रेस गोल्डन क्लेटन ने किया था। 'प्रथम फादर्स डे चर्च' आज भी सेन्ट्रल यूनाइटेड मेथोडिस्ट चर्च के नाम से फेयरमोंट में मौजूद है।

फिलहाल प्रचलित लोकप्रिय अवधारणा के अनुसार माना जाता है कि फादर्स डे सर्वप्रथम 19 जून 1910 को वाशिंगटन में मन. ाया गया। इसके पीछे भी एक रोचक कहानी है– सोनेरा डोड की। सोनेरा डोड जब नन्ही सी थीं, तभी उनकी माँ का देहांत हो गया। पिता विलियम स्मार्ट ने सोनेरो के जीवन में माँ की कमी नहीं महस. ूस होने दी और उसे माँ का भी प्यार दिया। एक दिन यूँ ही सोनेरा के दिल में ख्याल आया कि आखिर एक दिन पिता के नाम क्यों नहीं हो सकता? इस तरह 19 जून 1910 को पहली बार फादर्स डे मनाया गया। 1924 में अमेरिकी राष्ट्रपति कैल्विन कोली ने फादर्स डे पर अपनी सहमति दी। फिर 1966 में राष्ट्रपति लिंडन जानसन ने जून के तीसरे रविवार को फादर्स डे मनाने की आधिकारिक घोषण ाा की। 1972 में अमेरिका में फादर्स डे पर स्थायी अवकाश घोषित हुआ। फिलहाल पूरे विश्व में जून के तीसरे रविवार को फादर्स डे मनाया जाता है।

भारत में भी धीरे–धीरे इसका प्रचार–प्रसार बढ़ता जा रहा है। इसे बहुराष्ट्रीय कंपनियों की बढती भूमंडलीकरण की अवधारणा के परिप्रेक्ष्य में भी देखा जा सकता है और पिता के प्रति प्रेम के इजहार के परिप्रेक्ष्य में भी। पिता द्वारा अपने बच्चों के प्रति प्रेम का इजहार कई तरीकों से किया जाता है, पर बेटों–बेटियों द्वारा पिता के प्रति इजहार का यह दिवस अनूठा है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में कहा जा सकता है कि स्त्री–शक्ति का एहसास करने हेतु तमाम त्यौहार और दिन आरंभ हुए पर पितृसत्तात्मक समाज में फादर्स डे की कल्पना अजीब जरुर लगती है। पाश्चात्य देशों में जहाँ माता–पिता को ओल्ड एज हाउस में शिफ्ट कर देने की परंपरा है, वहाँ पर फादर्स–डे का औचित्य समझ में आता है। पर भारत में कहीं इसकी आड़ में लोग अपने दायित्वों से छुटकारा तो नहीं चाहते हैं, इस पर भी विचार करने की जरुरत है। जरुरत फादर्स–डे की अच्छी बातों को अपनाने की है, न कि पाश्चात्य परिप्रेक्ष्य में उसे अपनाने की जरुरत है।

कोई भी पिता अपने बच्चों से क्या चाहता है– प्यार का सच्चा इजहार, बच्चों का साथ, मान–सम्मान और यह आश्वस्ति कि बुजुर्ग होने पर बच्चे उनका भी पूरा ख्याल रखेंगे। बच्चों की हर सफलता के साथ पिता गौरवान्वित होता है। उन्हें लगता है कि जिन आदर्शों के लिए उन्होंने दिन–रात एक किया, बेटे–बेटियों ने उसे साकार किया। ऐसे में सिर्फ एक दिन 'फादर्स डे' मना कर अपने दायित्वों से इतिश्री नहीं किया जा सकता। माता–पिता ही दुनिया की सबसे गहरी छाया होते हैं, जिनके सहारे जीवन जीने का सौभाग्य हर किसी के बस में नहीं होता। इसलिए माता–पिता का आशीर्वाद लेकर सिर्फ एक दिन ही उन्हें याद ना करते हुए प्रतिदिन उन्हें नमन कर अपना जीवन सार्थक करना चाहिए। ■

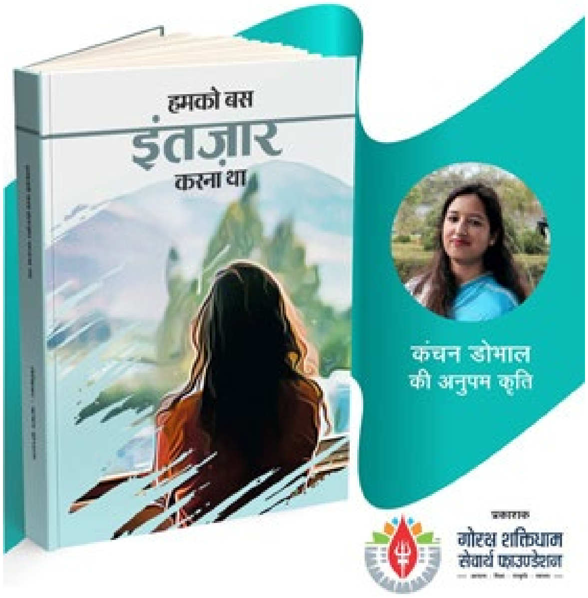

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन
www.gssfoundation.org
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र

......गतांक से आगे

क्या है भारतीय संस्कृति में 16 संस्कार?

पंडित कैलाशनारायण
ज्योतिषाचार्य
उज्जैन, मध्य प्रदेश

हिंदू धर्म में सोलह संस्कारों का बहुत महत्व है। ये संस्कार ही प्रत्येक जन्म में संगृहीत (एकत्र) होते चले जाते हैं, जिससे कर्मो (अच्छे–बुरे दोनों) का एक विशाल भंडार बनता जाता है। इसे संचित कर्म कहते हैं। इन संचित कर्मों का कुछ भाग एक जीवन में भोगने के लिए उपस्थित रहता है और यही जीवन प्रेरणा का कार्य करता है। अच्छे–बुरे संस्कार होने के कारण मनुष्य अपने जीवन में अच्छे–बुरे कर्म करता है। फिर इन कर्मो से अच्छे–बुरे नए संस्कार बनते रहते हैं तथा इन संस्कारों की एक अंतहीन श्रृंखला बनती चली जाती है, जिससे मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

10. **कर्णवेध संस्कार** – हमारे मनीषियों ने सभी संस्कारों को वैज्ञानिक कसौटी पर कसने के बाद ही प्रारम्भ किया है। कर्णवेध संस्कार का आधार बिल्कुल वैज्ञानिक है। बालक की शारीरिक व्याधि से रक्षा ही इस संस्कार का मूल उद्देश्य है। प्रकृति प्रदत्त इस शरीर के सारे अंग महत्वपूर्ण हैं। कान हमारे श्रवण द्वार हैं। कर्ण वेधन से व्याधियां दूर होती हैं तथा श्रवण शक्ति भी बढ़ती है। इसके साथ ही कानों में आभूषण हमारे सौन्दर्य बोध का परिचायक भी है।यज्ञोपवीत के पूर्व इस संस्कार को करने का विधान है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार शुक्ल पक्ष के शुभ मुहूर्त में इस संस्कार का सम्पादन श्रेयस्कर है।

11. **यज्ञोपवीत/उपनयन संस्कारय** – यज्ञोपवीत (संस्कृत संधि विच्छेद = यज्ञ+उपवीत) शब्द के दो अर्थ हैं–उपनयन संस्कार जिसमें जनेऊ पहना जाता है । मुंडन और पवित्र जल में स्नान भी इस संस्कार के अंग होते है। सूत से बना वह पवित्र धागा जिसे यज्ञोपवीतधारी व्यक्ति बाएँ कंधे के ऊपर तथा दाई भुजा के नीचे पहनता है। यज्ञ द्वारा संस्कार किया गया उपवीत, यज्ञसूत्र यज्ञोपवीत एक विशिष्ट सूत्र को विशेष विधि से ग्रन्थित करके बनाया जाता है। इसमें सात ग्रन्थियां लगायी जाती हैं । ब्राम्हणों के यज्ञोपवीत में ब्रह्मग्रंथि होती है। तीन सूत्रों वाले इस यज्ञोपवीत को गुरु दीक्षा के बाद हमेशा धारण किया जाता है। तीन सूत्र हिंदू

त्रिमूर्ति ब्रह्मा, विष्णु और महेश के प्रतीक होते हैं। अपवित्र होने पर यज्ञोपवीत बदल लिया जाता है। बिना यज्ञोपवीत धारण कये अन्न जल गृहण नहीं किया जाता।

12. **वेदारम्भ संस्कार** – ज्ञानार्जन से सम्बन्धित है यह संस्कार। वेद का अर्थ होता है ज्ञान और वेदारम्भ के माध्यम से बालक अब ज्ञान को अपने अन्दर समाविष्ट करना शुरू करे यही अभिप्राय है इस संस्कार का। शास्त्रों में ज्ञान से बढ़कर दूसरा कोई प्रकाश नहीं समझा गया है। स्पष्ट है कि प्राचीन काल में यह संस्कार मनुष्य के जीवन में विशेष महत्व रखता था। यज्ञोपवीत के बाद बालकों को वेदों का अध्ययन एवं विशिष्ट ज्ञान से परिचित होने के लिये योग्य आचार्यो के पास गुरुकुलों में भेजा जाता था। वेदारम्भ से पहले आचार्य अपने शिष्यों को ब्रह्मचर्य व्रत कपालन करने एवं संयमित जीवन जीने की प्रतिज्ञा कराते थे तथा उसकी परीक्षा लेने के बाद ही वेदाध्ययन कराते थे। असंयमित जीवन जीने वाले वेदाध्ययन के अधिकारी नहीं माने जाते थे। हमारे चारों वेद ज्ञान के अक्षुण्ण भंडार हैं।

13. **केशान्त संस्कार** – गुरुकुल में वेदाध्ययन पूर्ण कर लेने पर आचार्य के समक्ष यह संस्कार सम्पन्न किया जाता था। वस्तुत: यह संस्कार गुरुकुल से विदाई लेने तथा गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने का उपक्रम है। वेद–पुराणों एवं विभिन्न विषयों में पारंगत होने के बाद ब्रह्मचारी के समावर्तन संस्कार के पूर्व बालों की सफाई की जाती थी तथा उसे स्नान कराकर स्नातक की उपाधि दी जाती थी। केशान्त संस्कार शुभ मुहूर्त में किया जाता था।

14. **समावर्तन संस्कार** – गुरुकुल से विदाई लेने से पूर्व शिष्य का समावर्तन संस्कार होता था। इस संस्कार से पूर्व ब्रह्मचारी का केशान्त संस्कार होता था और फिर उसे स्नान कराया जाता था। यह स्नान समावर्तन संस्कार के तहत होता था। इसमें सुगन्धित पदार्थो एवं औषधादि युक्त जल से भरे हुए वेदी के उत्तर भाग में आठ घड़ों के जल से स्नान करने का विधान है। यह स्नान विशेष मन्त्रोच्चारण के साथ होता था। इसके बाद ब्रह्मचारी मेखला व दण्ड को छोड़ देता था जिसे यज्ञोपवीत के समय धारण कराया जाता था। इस संस्कार के बाद उसे विद्या स्नातक की उपाधि आचार्य देते थे। इस उपाधि से वह सगर्व गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने का अधिकारी समझा जाता था। सुन्दर वस्त्र व आभूषण धारण करता था तथा आचार्यो एवं गुरुजनों से आशीर्वाद ग्रहण कर अपने घर के लिये विदा होता था।

15. **विवाह संस्कार** – ▸ हिन्दू धर्म में– इसी संस्कार के बाद से मनुष्य के चार आश्रमों में से सबसे अहम आश्रम यानी गृहस्थ आश्रम का आरंभ होता है। इस संस्कार को समावर्तन संस्कार के बाद किया जाता है। अपनी शिक्षा दीक्षा को पूरा कर जातक गृहस्थ आश्रम की ओर बढ़ता है। इसी संस्कार से व्यक्ति पितृऋण से भी मुक्त हो जाता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार विवाह कोई शारीरिक या सामाजिक अनुबन्ध मात्र नहीं हैं, यहाँ दाम्पत्य को एक श्रेष्ठ आध्यात्मिक साधना का भी रूप दिया गया है ।इसलिए कहा गया है कि – 'धन्यो गृहस्थाश्रमः।' सद्गृहस्थ ही समाज को अनुकूल व्यवस्था एवं विकास में सहायक होने के साथ श्रेष्ठ नई पीढ़ी बनाने का भी कार्य करते हैं ।

▸ श्रुति ग्रंथो में विवाह के स्वरूप को व्याख्यायित किया गया है कि दो शरीर, दो मन, दो बुद्धि, दो हृदय, दो प्राण एवं दो आत्माएं का मेल ही विवाह है। ऐसा कहा जाता है कि जब जातक का जन्म होता है तब वो देव ऋण, ऋषि ऋण और पितृ ऋण का ऋणि होता है। ऐसे में देव ऋण चुकाने के लिए पूजा–पाठ, यज्ञ हवन आदि किए जाते हैं। फिर ऋषि ऋण से मुक्त होने के लिए वेदाध्यन संस्कार यानि गुरु से ज्ञान प्राप्त किया जाता है। वहीं, पितृ ऋण से मुक्त होने के लिए विवाह संस्कार का होना बेहद आवश्यक हो जाता है। हिन्दू दर्शन के मुताबिक आश्रम प्रणाली में विवाह की उम्र 25 वर्ष थी ।ब्रह्मचर्य आश्रम में अपनी पढ़ाई पूर्ण करने के बाद ही व्यक्ति विवाह कर सकता था।

▸ विवाह एक ऐसा कर्म या संस्कार है जिसे बहुत ही सोच–समझ और समझदारी से किए जाने की आवश्यकता है। जब दोनों ही पक्ष सभी तरह से संतुष्ट हो जाते हैं तभी इस विवाह को किए जाने के लिए शुभ मुहूर्त निकाला जाता है। इसके बाद वैदिक पंडितों के माध्यम से विशेष व्यवस्था, देवी पूजा, वर वरण तिलक, हरिद्रालेप, द्वार पूजा, मंगलाष्टकं, हस्तपीतकरण, मर्यादाकरण, पाणिग्रहण, ग्रंथिबन्धन, प्रतिज्ञाएं, प्रायश्चित, शिलारोहण, सप्तपदी, शपथ आश्वासन आदि रीतियों को पूर्ण किया जाता है।

16. **अन्त्येष्टि संस्कार/श्राद्ध संस्कार** – ▸ हिंदूओं में किसी की मृत्यु हो जाने पर उसके मृत शरीर को वेदोक्त रीति से चिता में जलाने की प्रक्रिया को अन्त्येष्टि क्रिया अथवा अन्त्येष्टि संस्कार कहा जाता है। यह हिंदू मान्यता के अनुसार सोलह संस्कारों में से एक संस्कार है।अंत्येष्टि का अर्थ है, अन्तिम यज्ञ। दूसरे शब्दों में जीवन यज्ञ की यह अन्तिम प्रक्रिया है। मृत्यु निकट आने पर रिश्तेदारों और पुरोहित को बुलाया जाता है, और मंत्रो व पवित्र ग्रंथों का पाठ होता है। मृत्यु के उपरांत शव को जल्द से जल्द श्मशान घाट पर ले जाते हैं, जो आमतौर पर नदी तट पर स्थित होता है। मृतक का सबसे बड़ा पुत्र और आनुष्ठानिक पुरोहित दाह संस्कार करते हैं। प्रथम पन्द्रह संस्कार ऐहिक जीवन को पवित्र और सुखी बनाने के लिए है। ब्राह्मणों में 10 दिन तक (क्षत्रिय में 12, वैश्यों में 15 और शूद्रों में 30 दिन) परिवार के सदस्यों को अपवित्र समझा जाता है। और उन पर कुछ वर्जनाएं लागू रहती हैं। इस अवधि में वे अनुष्ठान करते है। ताकि आत्मा अगले जीवन में प्रवेश कर ले। इन अनुष्ठानों में दूध और जल तथा अधपके चावल के पिंडों का अर्पण शामिल है। मृतकों के सम्मान में निश्चित तिथियों पर संबंधियों द्वारा श्राद्ध किए जाते हैं।

▸ भारतीय संस्कृति ने यह तथ्य घोषित किया है कि मृत्यु केसाथ जीवन समाप्त नहीं होता, अनन्त जीवन श्रृंखला की एक कड़ी मृत्यु भी है, इसलिए संस्कारों के क्रम में जीव की उस स्थिति को भी बाँधा गया है। जब वह एक जन्म पूरा करके अगले जीवन की ओर उन्मुख होता है,तो कामना की जाती है कि सम्बन्धित जीवात्मा का अगला जीवन पिछले की अपेक्षा अधिक सुसंस्कारवान् बने। इस निमित्त जो कर्मकाण्ड किये जाते हैं, उनका लाभ जीवात्मा को क्रिया–कर्म करने वालों की श्रद्धा के माध्यम से ही मिलता

है। इसलिए मरणोत्तर संस्कार को श्राद्धकर्म भी कहा जाता है। यों श्राद्धकर्म का प्रारम्भ अस्थि विसर्जन के बाद से ही प्रारम्भ हो जाता है।निश्चित तिथि को श्मशान से एकत्रित अस्थि अवशेष या तो दफन कर दिया जाता है या फिर नदी में प्रवाहित कर दिया जाता है।

▸कुछ लोग नित्य प्रातः तर्पण एवं सायंकाल मृतक द्वारा शरीर के त्याग के स्थान पर या पीपल के पेड़ के नीचे दीपक जलाने का क्रम चलाते रहते हैं। मरणोत्तर संस्कार अन्त्येष्टि संस्कार के तेरहवें दिन किया जाता है। जिस दिन अन्त्येष्टि (दाह क्रिया) होती है, वह दिन भी गिन लिया जाता है। कहीं–कहीं बारहवें दिन की भी परिपाटी होती है। बहुत से क्षेत्रों में दसवें दिन शुद्धि दिवस मनाया जाता है, उस दिन मृतक के निकट सम्बन्धी क्षौर कर्म कराते हैं, घर की व्यापक सफाई–पुताई शुद्धि तक पूर्ण कर लेते हैं, जहाँ तेरहवीं ही मनायी जाती है, वहाँ यह सब कर्म श्राद्ध संस्कार के पूर्व कर लिये जाते हैं। प्रत्येक शुभ कार्य के प्रारम्भ में माता–पिता,पूर्वजों को नमस्कार प्रणाम करना हमारा कर्तव्य है। ऋषियों ने वर्ष में एक पक्ष को पितृपक्ष का नाम दिया, जिस पक्ष में हम अपने पितरेश्वरों का श्राद्ध,तर्पण, मुक्ति हेतु विशेष क्रिया संपन्न कर उन्हें अर्ध्य समर्पित करते हैं। यदि कोई कारण से उनकी आत्मा को मुक्ति प्रदान नहीं हुई है तो हम उनकी शांति के लिए विशिष्ट कर्म करते हैं। ■

मेरी मां

संजू पाठक
स्वतंत्र लेखन
इंदौर, मध्य प्रदेश

मेरी मां हो गई अब मांस का लोथड़ा सा
जरा सा छोड़ो
तो लुढ़क जाती है इधर उधर।
गिर न जाए लगता है डर।।
हो रहा है कंकाल तन अब तुम्हारा ।
मां तुम क्यों अब सिमटने लगी हो?

आया है अब जो वक्त मेरे इम्तेहान का
पाया है तुम्हारी सेवा का अवसर
तो मुझसे अब दूर क्यों जाने लगी हो?
मां तुम क्यों अब सिमटने लगी हो?

लगाया सीने से चिपका के तुमने,
ना पाई कमी हमने अपनी परवरिश में।
सजाया, संवारा हसरतों से सदा ही
रखा छांव में खुद रही हो तपिश में।।

बड़े चाव से मां तुम बनाती थी भोजन।
खिला के हमें, करती थीं स्वयं तृप्त मन।।
गजब स्वाद होता था मां तुम्हारे करों में,
गया वक्त कैसे?भूल सकते हैं न हम।।

बड़ी हसरतों से हमें गुड़िया सा सजाना।
हरेक रात दिन बस हमीं में बिताना।।

खिले फूल छः आपकी नन्हीं सी बगिया मे
मधुर, मंद मकरंद से उसको महकाया।।

ना पाई कमी कोई जीवन में अपने,
हुए पूर्ण सारे जो देखे थे सपने।।
मिला साथ पापा का सबको हर कदम पर
खिला बागवान, हसीन आशियां बन गया फिर।।

अजब रीति का अब तो आया जमाना।
दिवस मातृ का अब लगे हैं मनाना।
तुम्हीं से हरेक दिन , मनाऊं क्या इक दिन
तुम्हारे ही साए में है हरेक दिन बिताना।।

भरे हैं जो जेहन में संस्कार मां तुमने
वही बन गए आज पहचान मेरी।
ये कहते हैं सब हूं मैं प्रतिलिपि तुम्हारी,
मिले हर जनम में मुझे गोद तेरी ।।

स्थायी स्तम्भ

डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह
भू–वैज्ञानिक, पर्यावरणविद्
एवं हिन्दी रचनाकार, पटना

पर्यावरण चिन्तन 5

यह सर्वविदित है कि पृथ्वी ग्रह पर नाना प्रकार के वनस्पतियाँ और जीव–जन्तुओं का विचित्र हुजूम है। इस तरह के विद्यमान जीवों, वनस्पतियों एवं प्राणियों के सामूहिक समुदाय को जैव–विविधता की संज्ञा दी जाती है। प्रकृत के सौन्दर्य का श्रृंगारिक प्रतिमान है जैव–विविधता। सौम्य, स्वच्छ और सन्तुलित पर्यावरण की निशानी है समृद्ध जैव–विविधता। साथ ही निरीह प्राणियों के बीच (भोजन–श्रृंखला) का पोषक है जैव–विविधता। सामान्य अर्थ में जैव का आशय जीव एवं जैविक पदार्थ तथा विविधता का आशय भिन्नता एवं विभिन्न रूपों से है। इसी समुच्चय से प्रकृति का सौन्दर्यबोध होता है।

जैव–विविधता को लेकर हमारा देश विश्व–पटल पर काफी समृद्धशाली है। एक अनुमानित गणना के आधार पर कहा गया है कि पेड़–पौधों की करीबन पैंतालीस हजार प्रजातियाँ हैं। इन प्रजातियों में करीब पन्द्रह हजार पुष्प–प्रजातियाँ हैं। इसी प्रकार जीव–जन्तुओं की लगभग पैसठ हजार प्रजातियाँ हैं। यह भी अनुमान लगाया गया है कि लगभग पचास हजार कीड़े–मकोड़े की प्रजातियाँ हैं और तीन सौ चालीस स्तनपायी जीवों की प्रजातियाँ हैं तथा दो सौ प्रजातियाँ मछलियों की हैं। सभी आपस में अपनी गतिविधियों में संलग्न रहते हैं। किसी से कोई बैरभाव नहीं। यह अरण्यक–संस्कृति की उत्कृष्ट पहचान है।

पर्यावरण में पारिस्थितिकी संतुलन बनाये रखना इनका मूल दायित्व है। स्पष्ट है कि जैव–विविधता का जो वर्तमान स्वरूप सृजित है वह अतीत के भूगर्भिक कालों में अनेक उतार–चढ़ाव एवं संघर्षो के फलस्वरूप निर्मित हुआ है। इस प्रकार अतीत के करोड़ों वर्षो के दौरान अनवरत सक्रिय रहने वाली जैविक प्रक्रिया की देन हमारी जैव–विविधता है। यह प्राकृतिक विरासत इस पर्यावरण की आधारशिला है। इसपर ही हमारा जीवन–अस्तित्व टिका हुआ है। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं कि जैव–विविधता एवं इनके मध्य विद्यमान दृश्य–अदृश्य सम्बन्धों के कारण पृथ्वी पर जीवन है,जिसकी अक्षुण्णता हमारे चिन्तन का मूल विषय है।

भू–पटल पर स्थलाकृति विन्यास एवं जलवायु की दशाओं में विषमता विद्यमान है जिस कारण जैव–विविधता में भिन्नता है। इसी भिन्नता के आधार पर समूचे विश्व को क्रमशः अत्यधिक, अधिक, कम और निम्न जैव– विविधता वाले स्तरों में विभाजित किया गया है। इस संदर्भ में हम सौभाग्यशाली है कि अभी तक हमारा देश अधिक स्तर की कोटि में है। साथ ही पारिस्थितिकी जैव–विविधता में भी हम धनी हैं। प्रकृति द्वारा उद्भुत जीवन–समर्थक प्रणाली को सुरक्षित रखना तथा उन जीवन–संसाधनों की रक्षा करना, जो पारिस्थितिकी विषयक स्थायी विकास में सतत् योगदान देते हैं,वह जैव–विविधता संरक्षण के तहत आता है। जैव–विविधता को क्षति पहुंचाने वाले निम्न कारणों यथा–प्रदूषण आवासीय विनाश, आवासीय–विखंडन, प्राकृतिक आपदाएँ, विकिरण, जलवायु–परिवर्तन,जनसंख्या–वृद्धि, पर्यटन में भीड़, अपशिष्ट–जनन में वृद्धि आदि के प्रति सचेत रहने की जरूरत होगी। शिकार को प्रतिबन्धित करना होगा। प्राकृतिक परिवर्तनों के कारण प्रजातियों में क्षरण हो रहा है। प्रजातियों का विलुप्तिकरण जैव–विविधता के ह्रास का मुख्य कारण है। प्रजातियों के आरक्षित क्षेत्रों के प्रबंधन में प्राकृतिकता को प्रवेश देना होगा। अभी जो वैश्विक–तापन और जलवायु–परिवर्तन की आगत विभीषिका से जैव–विविधता को सुरक्षित रखना समय की मांग है।

क्रमशः

18 जून पर विशेष

अंतर्राष्ट्रीय पिता दिवस

अनुभवों की खूबसूरत किताब 'पिता'

श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा
उपसम्पादक (अध्यात्म संदेश)
सेवानिवृत्त प्रधानाचार्या
राजकीय विद्यालय, लखनऊ

संक्षिप्त एवं प्यारा शब्द 'पिता' स्वयं में इतना गौरवशाली है कि इसके विषय में कुछ भी कहना सूरज को दीपक दिखाने के समान है। इसे परिभाषित करने के लिए न तो किसी भी विशेषण तथा उपमा की आवश्यकता होती है, न ही बड़े पद एवं प्रतिष्ठा का होना जरूरी है। पिता शब्द का मात्र उच्चारण ही गगन की ऊचाइयों को स्पर्श करने की, समुद्र की गहराई को छूने की एवं संपूर्ण ब्रह्मांड को नापने की सामर्थ्य रखता है। एक व्यक्ति के जीवन में जहां मां का प्यार, दुलार और त्याग का महत्वपूर्ण योगदान होता है वहीं उसके सर्वांगीण विकास के लिए पिता की कठोरता एवं अनुशासन भी उतना ही आवश्यक है, ठीक उसी तरह जैसे कुम्हार एक मिट्टी के घड़े को सुंदर आकार एवं मजबूती देने के लिए अपने हाथों के कोमल सहारे के साथ– साथ उसे आग में तपाता भी है। सच पूछें तो पिता का प्यार उस बरगद के वृक्ष की तरह है जिस की छांव तले उसके बच्चे स्वयं को सुरक्षित एवं प्रसन्न चित्त पाते हैं।

एक मां अपनी कोख में अपने बच्चे को नौ माह तक पालती है और उसके उज्जवल भविष्य लिए सदैव ईश्वर से प्रार्थना करती है, तो पिता को जिस दिन से पिता बनने का एहसास होता है उसी दिन से बच्चे के पालन पोषण एवं उसके उन्नत भविष्य के लिए चिंतित होने लगता है और बच्चे के जन्म के बाद ही वह पूर्ण पुरुष की भांति जिम्मेदारी से बच्चे की सभी सुविधाओं का ध्यान रखने लगता है साथ ही उसके उज्जवल भविष्य के लिए बचत भी करना प्रारम्भ कर देता है , भले ही इसके लिए उसे अपनी आवश्यकताओं में कटौती करनी पड़ जाए। उसकी सदैव यही अभिलाषा रहती है कि उसकी संतान आगे चलकर उससे भी सफल एवं यशस्वी बन समाज में अपना नाम ऊंचा कर सके। आज के स्वार्थी समाज में यह जज्बा केवल एक पिता ही रख सकता है ।

एक सफल पिता ने अपनी सफल बेटे के कंधे पर हाथ रख कर पूछा कि बेटा बताओ मुझमें और तुममें कौन ज्यादा सामर्थ्यवान है ? तो बेटे ने कहा 'पिताजी मैं' पिता ने बेटे के कंधे से हाथ हटाते हुए पूछा कि बेटा तुमने ऐसा क्यों कहा? तो बेटे ने जो जवाब दिया वह दिल को छूने वाला था, बेटे ने कहा की जिसके कंधे पर अपने पिता का हाथ हो उस जैसा सामर्थ्यवान संसार में और कोई हो ही नहीं सकता है और जब आपने मेरे कंधे से हाथ हटा लिया तो आप से अधिक सामर्थ्य किसी और में नहीं है, बेटे का उत्तर सुनकर पिता गदगद हो गए और भावुक हो कर अपने बेटे को गले से लगा लिया। यह केवल एक बेटे की कहानी नहीं है बल्कि संसार का हर बेटा अपने पिता का प्रश्रय, ज्ञान एवं आशीर्वाद प्राप्त कर स्वयं को सर्वश्रेष्ठ समझता है।

पिता एक निश्चिंता का नाम है, पिता वह सुरक्षा कवच है जो स्वयं आंधी ,तूफान झेलकर अपनी संतान की रक्षा करता है, पिता की छत्रछाया में संतान को एक सुखद एहसास रहता है कि भले ही पापा डाटेगें अथवा ताने देंगे फिर भी कभी मझधार में नहीं छोड़ेंगे। पिता का प्यार एवं वात्सल्य सामान्यतः प्रदर्शित नहीं हो पाता है पर उसकी हर धड़कन में व्याप्त रहता है, वह नारियल की भांति ऊपर से कठोर बना रहता है परन्तु अंदर से मां से भी अधिक कोमल होता है फिर भी बेटा हो या बेटी, हर किसी के मन में यही भावना होती है मेरे पिता जैसा कोई नहीं है, पिता ही अपने बच्चों का आदर्श होता है।

एक पिता का दायित्व बनता है कि वह अनुशासन के साथ साथ सदैव अपने बच्चों के साथ मित्रवत् व्यवहार रखे जिससे बच्चे अपनी परेशानियों को एवं अपने मनोभावों को अपने पिता के साथ साझा कर सकें । यूं तो जीवन के हर मोड़ में पिता का अपनी सन्तान के प्रति दायित्व बदलता रहता है जैसे बच्चे के जन्म से लेकर के पांच वर्ष तक प्यार ,दुलार एवं सुरक्षा के साथ उसका पालन पोषण करना चाहिए। पांच साल से दस वर्ष तक बच्चे को सख्त अनुशासन, नियम कानून और सामाजिक सरोकारों से परिचित कराना भी पिता का दायित्व बनता है। दस से पन्द्रह वर्ष तक बच्चे के व्यक्तित्व विकास एवं अध्ययन के प्रति समर्पित करने की आवश्यकता होती है और सोलह वर्ष तक आते आते हैं पिता का व्यवहार अपने बच्चों के प्रति मित्रवत् हो जाना चाहिए, विशेषकर बेटों के साथ क्योंकि इस उम्र के बाद अधिक डांट – फटकार एवं अनुशासन उन्हें विद्रोही स्वभाव का बना देता है जिससे वे गुमराह हो कर बुरी आदतों के शिकार बन जाते हैं और पिता की डांट के भय से अपनी बुराइयों को उनसे छुपाते रहते हैं जो कि भविष्य में उनके लिए अत्यंत घातक होता है अतः हर पिता का दायित्व बनता है वह अपने बच्चों से कम से कम इतनी नजदीकी बनाए रखें कि वे अपनी बात को पिता के साथ साझा कर सके। बेटियां तो अपने पिता के हृदय के अधिक निकट होती हैं परंतु अक्सर बेटे और पिता के बीच में कुछ समय पश्चात दूरियां बढ़ने लगती हैं यद्यपि दोनों के बीच में प्यार और सम्मान बना रहता है परन्तु निकटता की कमी हो जाती है। अतः इन परिस्थितियों से बचने के लिए शुरू से ही पिता और बेटे के मध्य हमेशा सकारात्मक रवैया रहना चाहिये।

जहां पिता की बच्चों के प्रति जिम्मेदारियां होती हैं वहीं अपने सम्मानीय पिता के प्रति बच्चों के भी दायित्व होते हैं, उन्हें अपने पिता के गुणों का सम्मान एवं उनका अनुकरण करना चाहिए। कोई भी ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए जिससे उनके पिता के सम्मान को ठेस पहुंचे और समाज में उनका सिर नीचा हो। पितृ दिवस के उपलक्ष्य पर समस्त बच्चों से निवेदन है कि वे अपने पिता की डांट पर नाराज न हो कर उसमें छिपे मर्म को समझें और उस पर अमल करने का प्रयास करें जिससे भविष्य में दूसरों की फटकार न सुननी पड़े। उनके प्यार, त्याग एवं परिश्रम को सदैव याद रखना चाहिए क्योंकि –

जब पिता प्रसन्न होते हैं,
तो सभी देव खुश होते हैं।

आज की भागदौड़ की जिन्दगी और वैश्वीकरण के कारण बच्चे अपने माता– पिता से दूर रह कर अपने परिवार का भरण पोषण करते हैं, ऐसी स्थिति में अपने सम्मान एवं प्यार को व्यक्त करने हेतु प्रति वर्ष जून माह के तीसरे रविवार को पितृदिवस के रूप में मनाया जाता है। इस दिन के माध्यम से हर बेटा, बेटी अपने पिता के द्वारा किए गए परिश्रम, बलिदान और त्याग को याद करता है। यूं तो पितृ दिवस की शुरुआत वर्ष 1910 में वाशिंगटन में हुई थी परन्तु वर्ष 1924 को अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति केल्विन कोली ने इस दिन को सार्वजनिक रूप से मनाने की अनुमति प्रदान कर दी।अपने घरों से दूर देश विदेश में बैठे बच्चे इस दिन अपने पिता के प्रति अपने प्यार को भावपूर्ण सन्देशों एवं उपहार के माध्यम से उन्हें सुखद अहसास कराते हैं और पिता भी उनसे संवाद स्थापित कर बीच की दूरियों को मिटाने का प्रयास करते हैं।

अन्त में बस इतना ही कहूंगी कि माता–पिता दोनों ईश्वर का रूप है जहां मां के ममत्व से संतान अभिभूत हो जाती है वहीं उसे पिता की कठोरता को सूर्य की तपन की भांति स्वीकार करना चाहिए क्योंकि इन दोनों की अनुपस्थिति में चारों ओर अंधकार ही अंधकार फैल जाता है। पिता अपनी संतान की खुशी के लिए अपने सुखों को भूल कर उन्हीं की खुशी एवं उज्जवल भविष्य के लिए अपनी अपना सर्वस्व न्योछावर कर देता है, इसलिए पिता से अधिक दुनिया में कोई महत्वपूर्ण नहीं होता है क्योंकि एक पिता ही है जो निःस्वार्थ भाव सोचता है कि उसकी संतान उससे भी अधिक सफल और यशस्वी बने।

पिता एक उम्मीद है एक आस है,
परिवार की हिम्मत और विश्वास है।
बाहर से सख्त पर अंदर से नर्म है,
दिल में उसके दफन कई दर्द है।।

एक मुलाकात

संस्मरण

डॉ. अनीता पंडा 'अन्वी'
शिलांग, मेघालय

हम वाराणसी का प्रसिद्ध दशाश्वमेध घाट पर सुबह–ए–बनारस के सूर्योदय की छवि अपनी नेत्रों में समेटे हम स्वार्गिक आनन्द में खोये यूँ ही टहल रहे थे। शीतला घाट की सुबह–सुबह गंगा आरती से मन तन–मानों तृप्त सा हो गया था। सूर्योदय से पहले ही गंगा की उर्मियों में स्नान करके पवित्रता का भाव भक्त–गणों के मुख–मंडल पर सहज ही परिलक्षित हो रही था। घंटा–घड़ियाल, जय माँ गंगा, ओम नमः शिवाय ओम सर्वत्र व्याप्त था मानों सारा वातावरण शिवमय हो गया था, मात्र प्रतीक्षा थी भास्कर की रश्मियों की। घाट की सीढ़ियों पर बैठे–बैठे कुछ देर हो गई थी। आकाश मेघों से आच्छादित था। मैं मन ही मन 'ओम भास्कराय नमः' जपते हुए सूर्य देव से उदित होने की प्रार्थना कर रही थी। देखते ही देखते अंशुमाली अपनी पूर्ण सौन्दर्य के साथ अपनी कृपा बरसा रहे थे। गंगाजल को अंजलि में भर कर अर्घ्य दे आगे बढ़ी। तृप्त मन घाट के किनारे मसाले वाली लाल चाय की तलाश करने लगा।इतने में पीले रंग की खद्दर का कुर्ता पहने लगभग 30–35 वर्ष का चायवाले से कहा–भैया एक अच्छी सी चाय पिला दो। सहज मुस्कान के साथ उसने चाय दिया। चाय इतनी अच्छी थी कि मैंने दूसरा कप देने के लिए कहा। वह दूसरा कप निकाल कर चाय देने वाला था कि मैंने कहा – आप मेरे पहले वाले कप में ही दे दीजिए। उसने मेरा जूठा कप लेने के लिए हाथ बढ़ाया। मैंने कहा–भाई मेरा जूठा कप मत लो बस केटली से इसमें डाल दें। यह सुनकर उसने कहा–दीदी,आपलोग बड़े लोग हैं। आपका जूठा कप लेने में कैसा संकोच? आखिर जीव को अपने पूर्वजन्म के कर्मानुसार ही जीवन मिलता है और इसे स्वीकार कर लें तो जीना आसान हो जाता है। अरे ! भइया शरीर छोटा–बड़ा होता है, आत्मा तो एक ही है । यह सुनकर उसने कहा, आप जरूर स्कालर हैं तभी तो सोच में दर्शन है। आप भी तो केवल चायवाले नहीं है, मैंने पूछा। जी, मै सुबह दस बजे तक चाय बेच कर पारिवारिक जिम्मेदारियों को पूरा करता है। शेष समय में निःशुल्क संस्कृत की सेवा करता हूँ, जिससे हमारी संस्कृति बची रहे। मैं संस्कृत गोल्ड मैडलिस्ट हूँ। एक राष्ट्रीय श्लोक प्रतियोगिता में मैंने विष्णु सहस्रनाम का पाठ किया था और मुझे प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ था। यह सुनकर मैं नतमस्तक हो गई। उनसे हुई मुलाकात सूर्योदय के सौन्दर्य पर हावी हो गई।

रामचरित मानस एवं राक्षसों के मानवोचित मूल्य

प्रो. विनीत मोहन औदिच्य
विभागाध्यक्ष अंग्रेजी
वरिष्ठ कवि एवं गजलकार
सागर, मध्य प्रदेश

महाभारत व रामचरित मानस दोनों ही उच्च आदर्शों को प्रस्तुत करते हैं। इनमें बुराई पर अच्छाई की जीत का संदेश ही प्रमुख है। रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास जी ने दशरथ पुत्र अयोध्या के राजकुमार श्रीराम को मर्यादा पुरुषोत्तम माना है एवं सभी संबंधों में उन्हें श्रेष्ठतम मान कर पूजा है। श्री राम का पुत्र, भ्राता, पति, मित्र, शिष्य, स्वामी आदि, हर रूप अनुकरणीय है। वह जाति वर्ग से ऊपर उठकर मानव मात्र से तो प्रेम करते ही हैं, शरण में आये हुए की रक्षा हेतु दृढ़ संकल्पित हैं। वन्य प्राणियों व पक्षियों के प्रति उनका प्रेम देखते ही बनता है। रामचरितमानस के अन्य मानव पात्र दशरथ, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न, कौशल्या, सुमित्रा मुनि वशिष्ठ, विश्वामित्र, भरद्वाज, ऋषि अगस्त्य, गुहराज निषाद, अत्रि, सती अनुसुइया,शबरी के साथ पक्षीराज गरुड़, जटायु, काक भुशुंडि व वानररूप धारी हनुमान, सुग्रीव, अंगद व जामवंत का भक्ति युक्त आचरण भी हमें मंत्रमुग्ध कर देता है। पर इनके अतिरिक्त तामसिक वृत्तियों से परिपूर्ण संहार योग्य राक्षसों में जब हम मानवीय संवेदनाओं और मूल्यों को पाते हैं तो आश्चर्य चकित हो उठते हैं यह ठीक उसी प्रकार है जैसे महान आंग्ल कवि जॉन मिल्टन के सुप्रसिध्द महाकाव्य पैराडाइज लास्ट में ईश्वर से युद्ध में पराजित सेना

नायक शैतान, अपनी सेना को उद्बोधन में एक आदर्श याद्धा व नायक के आदर्श गुणों का परिचय देता है और खलनायक होते हुए भी सभी का हृदय जीत लेता है।

अरण्य कांड में सूपर्णखा के विवाह प्रस्ताव को ठुकरा कर लक्ष्मण जी द्वारा जब प्रभु श्रीराम के संकेत पर नाक कान विहीन कर दी जाती है तब वह खर–दूषण के पास अपने अपमान का बदला लेने की गुहार करती है। जब रण क्षेत्र में खर–दूषण राम लक्ष्मण का अप्रतिम सौंदर्य देख कर मंत्रमुग्ध रह जाते हैं और उनका वध करने योग्य न मान कर अपना दूत प्रेषित करते हैं कि राम अपनी भार्या सीता जी को उन्हें सौंपकर अनुज सहित सुरक्षित वापिस लौट जायें।

प्रभु विलोकि सर सकहिं न डारी। थकित भई रजनीचर धारी ।।
सचिव बोलि बोले खर दूषन। यह कोउ नृप बालक नर भूषन।।
हम भरि जन्म सुनहु सब भाई। देखी नहिं अस सुंदरताई।।
जद्यपि भगिनी कीन्हि कुरूपा। वध लायक नहिं पुरुष अनूपा।।

अरण्यकाण्ड, पृष्ठ संख्या – 645

खर दूषण के वध के पश्चात सूपर्णखा अपने भाई रावण के पास जाती है और नीति की शिक्षा देते हुए उसे भला बुरा कहती हैं।

राज नीति बिनु धन बिनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा।।
विद्या बिनु विवेक उपजाएँ। श्रम फल पढ़ें किएँ अरु पाएँ।।
संग ते जती कुमंत्र ते राजा। मान ते ज्ञान पान ते लाजा।।
प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी। नासहिं बेगि नीति अस सुनी।।

अरण्य काण्ड, पृष्ठ संख्या – 649

राक्षसराज रावण खर दूषण के वध का समाचार पा कर विचलित हो उठता है और स्वयं से कहता है कि खर–दूषण तो मेरे समान ही शक्तिशाली थे उन्हें स्वयं भगवान के अतिरिक्त भला कौन मार सकता है।

खर दूषन मो सम बलवंता । तिन्हहिं को मारइ बिनु भगवंता।।

अरण्यकाण्ड, पृष्ठ संख्या – 651

वह आगे तर्क करते हुए कहता है कि यदि प्रभु का अवतार हुआ है तो बह उनसे बैर बढ़ा कर युद्ध करेगा और मारे जाने पर परमगति को प्राप्त करेगा क्योंकि तामसी प्रवृत्ति की इस देह में उसके लिए ईश्वर भक्ति में स्वयं को लगा पाना संभव नहीं है और यदि दोनों राजकुमार साधारण मानव हैं तो वह उनको मृत्यु के घाट उतार कर, सीता को प्राप्त कर लेगा।

सुर रंजन भंजन महि भारा। जौं भगवंत लीन्ह अवतारा ।।
तौ मैं जाइ बैरु हठ करऊँ। प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ।।
होइहि भजनु न तामस देहा। मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा।।

अरण्यकाण्ड, पृष्ठ संख्या – 651

अपनी बहिन के अपमान का प्रतिशोध लेने के लिए रावण अपने मामा मारीच के पास जाता है और उसे कंचन मृग का रूप धारण कर श्री राम को पंचवटी से दूर गहन वन में ले जाने को कहता है ताकि वह सुअवसर पाकर सीता का अपहरण कर सके तब मारीच उसे राम के पौरुष का स्मरण कराते हुए कहता है।

तेहिं पुनि कहा सुनहु दससीसा। ते नर रूप चराचर ईसा।।
तासों तात बयरु नहिं कीजै। मारें मरिअ जिआएँ जीजै।।
जेहिं ताड़का सुबाहु हति खंडेउ हर कोदंड।
खर दूषन तिसरा बधेउ मनुज कि अस बरिबंड।।

अरण्यकाण्ड – दोहा – 25 /पृ.सं 653

रावण द्वारा धमकाने पर वह मन ही मन कहता है कि रावण के हाथों मारे जाने से बेहतर है कि प्रभु श्रीराम जी के हाथों मारे जा कर मोक्ष पद को प्राप्त करूँ।

निज परम प्रीतम देखि लोचन सुफल करि सुख पाइहौं।
श्री सहित अनुज समेत कृपा निकेत पद मन लाइहौं।।
निर्बान दायक क्रोध जा कर भगति अबसहि बसकरी।
निज पानि कर संधानि सो मोहि बधिहि सुख सागर हरी।।

अरण्यकाण्ड, पृष्ठ संख्या – 654

सुंदर काण्ड में राक्षसी लंकिनी हनुमान जी के मुष्टिका प्रहार करने पर भगवान राम की महिमा से सुपरिचित होकर संभलते हुए कहती हैं

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग।।

दोहा 4/पृ.सं 718

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदय राखि कौशलपुर राजा
गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।।

पृ.सं – 719

यह रावण का सहोदर विभीषण ही है जो राक्षस होकर भी रामभक्त है और वानर श्रेष्ठ हनुमान जी के विप्र वेश में उनके पास पहुँचने पर वह कह उठते हैं

तामस तन कछु साधन नाहीं। प्रीति न पद सरोज मन माहीं।।
अब मोहि भा भरोस हनुमंता। बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं संता।।
जौं रघुवीर अनुग्रह कीन्हा। तौ तुम मोहि दरसु हठि दीन्हा।।

सुंदरकाण्ड – पृ.सं – 720–21

विभीषण ही अशोक वाटिका में माता सीता तक हनुमान जी को पहुँचाने में सहायता करते हैं।

सुंदर काण्ड में पवनपुत्र हनुमान जी द्वारा सीता का पता लगा कर रावण पुत्र अक्षय कुमार का वध करने और अशोक वाटिका उजाड़ देने पर, विभीषण अपने बड़े भाई रावण को राम दूत हनुमान जी का वध करने से रोकते हैं।

नाइ सीस कर बिनय बहूता। नीति बिरोध न मारिअ दूता ।।
आन दंड कछु करिअ गोसाँई। सबही कहा मंत्र भल भाई।।

पृ.सं – 736

वह रावण से बारंबार प्रभु राम को सीताजी को लौटाने का

आग्रह भी करते हैं।

जो आपन चाहै कल्याना। सुजसि सुमति सुभ गति सुख नाना।।
सो परनारि लिलारि गोसाईं। तजउ चउथि के चंद कि नाईं।।
काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहर रघुबीरहि भजहु भजहिं जेहि संत ।।

दोहा 38/पृ.सं – 749

तात चरन गहि मागउँ राखहु मोर दुलार।
सीता देहु राम कहुँ अहित न होइ तुम्हार।।

दोहा 40/पृ.सं – 752

दशानन के लात मारने पर वह रावण को चेतावनी देकर प्रभु राम की शरण में सदा के लिए चले जाते हैं।

राम सत्य संकल्प प्रभु सभा कालबस तोरि।
मैं रघुवीर सरन अब जाउँ देहु जनि खोरि।।

दोहा 41/पृ.सं – 752

प्रभु राम से शरणागत विभीषण, उसको शरण प्रदान कर, रक्षा करने की याचना करते हैं

नाथ दसानन कर मैं भ्राता। निसिचर बंस जनम सुरत्राता ।।
सहज पाप प्रिय तामस देहा । जथा उलूकहि तम पर नेहा।।
श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर ।
त्राहि–त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुवीर।।

दोहा 45/पृ.सं – 755

रावण के विरुद्ध युद्ध में श्री राम के सहायक बनते हैं।

वह न केवल मेघनाद और रावण का यज्ञ विध्वंस कराते हैं बल्कि रावण से द्वंद युद्ध भी करते हैं और राम पर रावण के न मारे जाने का वास्तविक रहस्य भी प्रगट कर देते हैं जिसके कारण अंततः रावण मारा जाता है।

रावण के आदेश पर सीता को त्रास दे रही राक्षसियों को त्रिजटा अपने भयानक स्वप्न का वर्णन कर डरा देती है और उन्हें सीताजी को प्रताड़ित करने से रोकने में सफल रहती है

त्रिजटा नाम राक्षसी एका। राम चरन रति निपुन बिवेका।।
सबन्हौं बोलि सुनाएसि सपना। सीतहि सेइ करहु हित अपना।।

सुंदरकाण्ड – पृ.सं – 724

दशानन जब अशोक वाटिका में सीताजी को धमकाता है तो उसकी पत्नी महापटरानी मंदोदरी उसे रोकती है,

सुनत बचन पुनि मारन धावा। मयतनयाँ कहि नीति बुझाबा।।

सुंदरकाण्ड – पृ.सं – 723

हनुमान जी द्वारा लंका दहन के पश्चात भयभीत मंदोदरी रावण से प्रार्थना करती है

कंत करष हरि सन परिहरहू। मोर कहा अति हित हिय धरहू।।
तब कुल कमल बिपिन दुखदाई। सीता सीत निसा सम आई।।
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हे।।

सुंदरकाण्ड – पृ.सं – 747

जब मंदोदरी को पता चलता है कि राम ने वानर सेना की सहायता से समुद्र पर सेतु बना लिया है और लंका के समीप आ पहुँचे हैं तब भी वह अपने पति दशानन को राम की शरणागति होने की याचना करती है।

नाथ बयरु कीजे ताही सों। बुधि बल सकिअ जीत जाही सों।।
तुम्हहि रघुपतिहि अंतर कैसा । खलु खद्योत दिनकरहि जैसा।।

लंकाकाण्ड – पृ.सं – 777

रामहि सौंपि जानकी नाइ कमल पद माथ।
सुत कहुँ राज समर्पि बन जाइ भजिअ रघुनाथ।।

लंकाकाण्ड – दोहा – 6/पृ.सं – 778

लंकाकाण्ड में राम के दूत के रूप में जब अंगद रावण को आसन्न युद्ध को रोकने का संदेश देते हैं उसके बाद भी मंदोदरी रावण को राम से बैर मोल नहीं लेने की प्रार्थना करती है।

कंत समुझि मन तजहु कुमतिही।
सोह न समर तुम्हहि रघुपतिही।। *पृ.सं – 807*
बधि बिराध खर दूषनहि लीलाँ हत्यो कबंध।
बालि एक सरि मा᾽यो तेहि जानहु दसकंध ।।

दोहा 36/ पृ.सं – 808

दुइ सुत मरे दहेउ पुर अजहुँ पूर पिय देहु।
कृपासिंधु रघुनाथ भजि नाथ बिमल जसु लेहु।।

दोहा 37/पृ.सं – 809

रामजी द्वारा एक ही प्रयास में अदृश्य वाण से रावण के छत्र किरीट व मंदोदरी के श्रवनपूर गिराने पर मंदोदरी श्रीराम को सीताजी को लौटाने का अपने पति से बारंबार आग्रह करती है

सजल नयन कह जुग कर जोरी। सुनहु प्रानपति बिनती मोरी।।
कंत राम विरोध परिहरहू। जानि मनुज जनि हठ मन धरहू।।

लंकाकाण्ड – पृ.सं – 785

वीरघातिनी शक्ति का प्रयोग कर लक्ष्मण जी को युद्ध स्थल में मूर्छित कर देने के बाद, लंका के वैद्य राज सुषैन की अनुशंसा पर जब हनुमान जी संजीवनी बूटी लाने के लिए प्रस्थान करते हैं तो यह समाचार पाकर रावण स्वयं मुनि वेश में रह रहे कालनेमि के पास जाता है और उसे हनुमान को किसी तरह उलझा कर मार्ग में ही रोक लेने को कहता है ताकि लक्ष्मण तक समय पर औषधि न पहुँच सके तब कालनेमि रावण से कहता है।

भजु रघुपति करु हित आपना। छाँड़हु नाथ मृषा जल्पना ।।
नील कंज तनु सुंदर स्यामा। हृदय राखु लोचन अभिरामा ।।
मैं तैं मोर मूढ़ता त्यागू। महा मोह निसि सूतत जागू ।।
काल ब्याल कर भक्षक जोई। सपनेहुँ समर कि जीतिअ सोई।।

लंकाकाण्ड – पृ.सं – 826

क्रमशः

......गतांक से आगे

वैदिक विमान विज्ञान ऋषि भरद्वाज के विशेष संदर्भ में

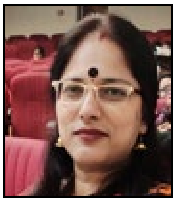

डॉ. विदुषी शर्मा
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
अकादमिक काउंसलर, IGNOU
शोध निर्देशक, JJTU
विशेषज्ञ, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, उच्चतर शिक्षा विभाग, भारत सरकार
OSD , (Officer on Special Duty) NIOS
दिल्ली

प्राचीन विमान विद्या भरद्वाज ऋषि का योगदान

महर्षि भारद्वाज यंत्र सर्वस्व नामक ग्रंथ लिखा था, उसका एक भाग वैमानिक शास्त्र है । इस पर बोधानन्द ने टीका लिखी थी। आज यंत्र सर्वस्व तो उपलब्ध नहीं है तथा वैमानिक शास्त्र भी पूरा उपलब्ध नहीं है। पर जितना उपलब्ध होता है , उससे यह विश्वास होता है कि पूर्व में विमान एक सच्चाई थे। इस ग्रंथ के पहले प्रकरण में प्राचीन विज्ञान विषय के पच्चीस ग्रंथों की एक सूची है,

जिनमें प्रमुख है....

अगस्त्यकृत – शक्तिसूत्र,

ईश्वरकृत – सौदामिनी कला,

भरद्वाजकृत – अशुबोधिनी, यंत्रसर्वसव तथा आकाश शास्त्र,

शाकटायन कृत – वायुतत्त्व प्रकरण,

नारदकृत – वैश्वानरतंत्र, धूम प्रकरण आदि ।

विमान शास्त्र की टीका लिखने वाले बोधानन्द लिखते है –

श्लोक

निर्मथ्य तद्वेदाम्बुधिं भरद्वाजो महामुनि:। नवनीतं समुद्घृत्य यन्त्रसर्वस्वरूपकम् ।
प्रायच्छत् सर्वलोकानामीप्सिताज्ञर्थ लप्रदम्। तस्मिन चत्वरिंशतिकाधिकारे सम्प्रदर्शितम्।।
नाविमानवैंचिर्त्यरचनाक्रमबोधकम्। अष्टाध्यायैर्विभजितं शताधिकरणैर्युतम।
सूत्रै: प्चिंशतैर्युक्तं व्योमयानप्रधानकम्। वैमानिकाधिकरणमुक्तं भगवतास्वयम्।।

अर्थ : भरद्वाज महामुनि ने वेदरूपी समुद्र का मन्थन करके यन्त्र सर्वस्व नाम का ऐसा मक्खन निकाला है , जो मनुष्य मात्र के लिए इच्छित फल देने वाला है। उसके चालीसवें अधिकरण में वैमानिक प्रकरण जिसमें विमान विषयक रचना के क्रम कहे गए हैं।

यह ग्रंथ आठ अध्याय में विभाजित है तथा उसमें एक सौ अधिकरण तथा पाँच सौ सूत्र हैं तथा उसमें विमान का विषय ही प्रधान है। ग्रंथ के बारे में बताने के बाद भरद्वाज ऋषि विमान

शास्त्र के उनसे पूर्व हुए आचार्य उनके ग्रंथों के बारे में लिखते हैं।

वे आचार्य तथा उनके ग्रंथ निम्नानुसार हैं ।

- नारायण कृत – विमान चन्द्रिका
- शौनक कृत न् व्योमयान तंत्र
- गर्ग – यन्त्रकल्प
- वायस्पतिकृत – यान बिन्दु +
- चाक्रायणीकृत खेटयान प्रदीपिका
- धुण्डीनाथ – व्योमयानार्क प्रकाश

इस ग्रन्थ में भरद्वाज मुनि ने विमान की परिभाषा, विमान का पायलट जिसे रहस्यज्ञ अधिकारी कहा गया, आकाश मार्ग, वैमानिक के कपड़े, विमान के पुर्जे, ऊर्जा, यंत्र तथा उन्हें बनाने हेतु विभिन्न धातुओं का वर्णन किया है।

▸ विमान की परिभाषा : अष् नारायण कृषि कहते हैं जो पृथ्वी, जल तथा आकाश में पक्षियों के समान वेग पूर्वक चल सके, उसका नाम विमान है।

शौनक के अनुसार– एक स्थान से दूसरे स्थान को आकाश मार्ग से जा सके , विश्वम्भर के अनुसार – एक देश से दूसरे देश या एक ग्रह से दूसरे ग्रह जा सके, उसे विमान कहते हैं ।

▸ रहस्यज्ञ अधिकारी (पायलट) : भरद्वाज ऋषि कहते हैं, विमान के रहस्यों को जानने वाला ही उसे चलाने का अधिकारी है। शास्त्रों में विमान चलाने के बत्तीस रहस्य बताए गए हैं। उनका भली भाँति ज्ञान रखने वाला ही उसे चलाने का अधिकारी है।

शास्त्रों में विमान चलाने के बत्तीस रहस्य बताए गए हैं। उनका भली भाँति ज्ञान रखने वाला ही सफल चालक हो सकता है। क्योंकि विमान बनाना, उसे जमीन से आकाश में ले जाना, खड़ा करना, आगे बढ़ाना, टेढ़ी – मेढ़ी गति से चलाना या चक्कर लगाना और विमान के वेग को कम अथवा अधिक करना उसे जाने बिना यान चलाना असम्भव है। अत: जो इन रहस्यों को जानता है, वह रहस्यज्ञ अधिकारी है तथा उसे विमान चलाने का अधिकारी है तथा उसे विमान चलाने का अधिकार है। वर्तमान में इसे ट्रेनिंग या प्रशिक्षण के साथ समझा जाता है।

▸ कृतक रहस्य : बत्तीस रहस्यों में यह तीसरा रहस्य है, जिसके अनुसार विश्वकर्मा, छायापुरुष, मनु तथा मयदानव आदि के विमान शास्त्र के आधार पर आवश्यक धातुओं द्वारा इच्छित विमान बनाना। इसमें हम कह सकते हैं कि यह हार्डवेयर का वर्णन है।

▸ गूढ़ रहस्य : यह पाँचवा रहस्य है जिसमें विमान को छिपाने की विधि दी गयी है । इसके अनुसार वायु तत्त्व प्रकरण में कही गयी रीति के अनुसार वातस्तम्भ की जो आठवीं परिधि रेखा है उस मार्ग की

'यासा , वियासा तथा प्रयासा' इत्यादि वायु शक्तियों के द्वारा सूर्य किरण रहने वाली जो अन्धकार शक्ति है, उसका आकर्षण करके विमान के साथ उसका सम्बन्ध बनाने पर विमान छिप जाता है ।

▸ अपरोक्ष रहस्य : यह नवाँ रहस्य है। इसके अनुसार शक्ति तंत्र में कही गयी रोहिणी विद्युत के फैलाने से विमान के सामने आने वाली वस्तुओं को प्रत्यक्ष देखा जा सकता है।

▸ संकोचा : यह दसवाँ रहस्य है। इसके अनुसार आसमान में उड़ने समय आवश्यकता पड़ने पर विमान को छोटा करना।

▸ विस्तृता : यह ग्यारवाँ रहस्य है। इसके अनुसार आवश्यकता पड़ने पर विमान को बड़ा करना। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि वर्तमान काल में यह तकनीक १९७0 के बाद विकसित हुई है।

▸ सर्पागमन रहस्य : यह बाइसवाँ रहस्य है जिसके अनुसार विमान को सर्प के समान टेढ़ी – मेढ़ी गति से उड़ाना संभव है। इसमें कहा गया है कि दण्ड, वक्रआदि सात प्रकार के वायु और सूर्य किरणों की शक्तियों का आकर्षण करके यान के मुख में जो तिरछें फेंकने वाला केन्द्र है उसके मुख में उन्हें नियुक्त करके बाद में उसे खींचकर शक्ति पैदा करने वाले नाल में प्रवेश कराना चाहिए। इसके बाद बटन दबाने से विमान की गति साँप के समान टेढ़ी – मेढ़ी हो जाती है।

▸ परशब्द ग्राहक रहस्य : यह पच्चीसंवा रहस्य है। इसमें कहा गया है कि सौदामिनी कला ग्रंथ के अनुसार शब्द ग्राहक यंत्र विमान पर लगाने से उसके द्वारा दूसरे विमान पर लोगों की बात–चीत सुनी जा सकती है ।

▸ रूपाकर्षण रहस्य : इसके द्वारा दूसरे विमानों के अंदर का सबकुछ देखा जा सकता था ।

▸ दिक्प्रदर्शन रहस्य : दिशा सम्पत्ति नामक यंत्र द्वारा दूसरे विमान की दिशा ध्यान में आती है। वर्तमान में राडार यही है।

▸ स्तब्धक रहस्य : एक विशेष प्रकार का अपस्मार नामक गैस स्तम्भन यंत्र द्वारा दूसरे विमान पर छोड़ने से अंदर के सब लोग बेहोश हो जाते हैं।

▸ कर्षण रहस्य : यह बत्तीसवाँ रहस्य है, इसके अनुसार अपने विमान का नाश करने आने वाले शत्रु के विमान पर अपने विमान के मुख में रहने वाली वैश्वानर नाम की नली में ज्वालिनी को जलाकर सत्तासी लिंक (डिग्री जैसा कोई नाप है) प्रमाण हो, तब तक गर्म कर फिर दोनों चक्कल की कीलि (बटन) चलाकर शत्रु विमानों पर गोलाकार से उस शक्ति की फैलाने से शत्रु का विमान नष्ट हो जाता है।

आकाश मार्ग : महर्षि शौनक आकाश मार्ग का पाँच प्रकार का विभाजन करते हैं तथा धुण्डीनाथ विभिन्न मार्गों की ऊँचाई विभिन्न मार्गों की ऊँचाई पर विभिन्न आवर्त्त या whirlpool का उल्लेख करते हैं और उस ७ उस ऊँचाई पर सैकड़ों यात्रा पथों का संकेत देते हैं । इसमें पृथ्वी से १00 किलोमीटर ऊपर तक विभिन्न ऊँचाईयों पर निर्धारित पथ तथा वहाँ कार्यरत शक्तियों का विस्तार से वर्णन करते हैं ।

क्रमशः

शिवोपासना जनजातीय समाज

रीता रानी
स्कूली शिक्षा एवं साक्षरता विभाग,
जमशेदपुर, झारखंड

झारखंड के जनजातियों को मैंने शिवोपासक पाया है, शंकरोपासना हेतु उत्कट – उद्दाम साधना– वैशाख मास में मनाया जानेवाला 'मण्डा पर्व' झारखण्ड में जनजातीय संस्कृति का विशिष्ट समर्पित पक्ष। वैशाख मास की शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि से प्रारंभ होने वाले इस पर्व में मुख्य रूप से किन्नर ही साधक बनते हैं। वे कलश में जल भरकर लाने से लेकर 'फूलखूँदी' (अंगारों पर नंगे पांव चलने की क्रिया) तक – पूर्ण आस्था की जीवंत प्रतिमूर्ति प्रतीत होते हैं। अन्य साधक गाँव के पुरुष भी होते हैं जो धोती धारण कर शीर्ष पर कलश स्थापित कर निकटस्थ जलस्त्रोत, तालाब आदि से जल भर कर मंदिर में देवता के समक्ष स्थापित कर देते हैं। तत्पश्चात पुजारी के द्वारा अर्चन की क्रिया संपन्न होती है जो लगभग एक – दो घंटे तक चलती है।आगामी दिवस दिनकर की उपस्थिति में पुनः कालेश्वर की वंदना स्थान ग्रहण करती है और दिवाकर की रश्मियों के ढलान के साथ अपराह्न तीन – चार बजे से भोक्ताओं द्वारा भोलेबाबा आराधन की भिन्न क्रिया प्रारंभ होती है,जिसमें वे अपनी पीठ में लोहे की हुक जैसी संरचना (दो) चमड़े के अंदर छेद करके फँसाते हैं, स्वभावतः पुश्त रक्तरंजित हो जाता है। उसके ऊपर धोती या अन्य कपड़े का मोटा पट्टा सा बांधकर साल की लकड़ी फँसाई जाती है। साल के इस काष्ठ को अन्य काठ से बांध दिया जाता है, जो जमीन में गड़ी होती है। साल की लकड़ी को मजबूती देने के लिए इसे लगभग वर्ष भर पानी में डुबोकर रखा जाता है। अराधक जिस काठ के द्वारा अपनी पीठ से बँधे होते हैं, उसके दूसरे छोर पर एक रस्सी लगी होती है, जिसकी सहायता से नीचे खड़ा अन्य कोई, भोक्ता को वृतकार पथ में परिभ्रमण करवाता है। कुछ मचान भी बने होते हैं,जहां अपने परिक्रमण के दौरान भोक्ता 10–12 सेकंड के लिए अपने पांव कभी – कभी उस पर टिकाता है। मचान पर अन्य ग्रामवासी उपस्थित रहते हैं ताकि अप्रिय स्थिति में वे भोक्ता की सहायता कर सकें। भोक्ता के रूप में यह कष्टसाध्य प्रक्रिया वही करते हैं जिन्होंने कोई मनौती मान रखी हो। लगभग 10–12 चक्कर लगाने के पश्चात भोक्ता को नीचे उतार एक ग्रामवासी अपनी पीठ पर लाद

शिवालय के आगे पेट के बल लिटा देता है। लोहे का हुक निकाल वहां पर तेल और सिंदूर का लेप आरोपित होता है। अब दूसरा भोक्ता समर्पित है नागेश आराधना हेतु उसी तरह के परिक्रमण के लिए। जो भी जन अपने–अपने हृदय में मन्नत धारण किए होते हैं, बारी – बारी से वे सभी इस क्रिया को दोहराते हैं। जब तक यह क्रिया संपन्न नहीं हो जाती, तब तक संबंधित भोक्ता की माता या पत्नी भी उपवास रखती है जिसे 'सोखताईन' कहकर पुकारा जाता है। उपासना की इस क्रिया से गुजरने के बाद भोक्ता एवं सोखताईन द्वय ही–भोजन ग्रहण कर सकते हैं। परीवृत्ति करते हुए भोक्ता नीचे टॉफियों एवं सिक्कों को बिखेरते हैं निश्चयमेव बालटोली विशिष्ट रुप से लुब्ध होती होगी। कहीं–कहीं अर्चक जलते अंगारों पर भी पांव धरते हुए 10–12 कदमों के अंगारपथ से गुजरकर रुद्र के प्रति अपनी अकाट्य आस्था स्थापित करते हैं।

दूसरी तरफ उपासना स्थल के पास के मैदान में मेला भी अपना रूप ग्रहण कर रहा होता है– बच्चों के खिलौनों की दुकान, विविध मनभावन स्थानीय व्यंजनों के स्टाल ,स्त्रियों के साजोश्रृंगार की सामग्री से सुसज्जित विक्रयस्थली ... ये सब ग्रामीणों के लिए आकर्षण का केंद्र होते हैं। जब इतना कुछ हो तो भला मुर्गा लड़ाई की प्रतियोगिता कैसे न होगी। रात्रि बेला छऊ नृत्य के नाम पर समर्पित रहती है ।छऊ नृत्य झारखंड का पारंपरिक नृत्य, जिसमें कलाकारों द्वारा मुखौटे लगाकर और रंगीन चित्ताकर्षक परिधान धारण कर रामायण , महाभारत , दुर्गा स्तुति आदि विषय वस्तुओं पर मनमोहक नृत्य – ढोल – नगाड़े की तेज आवाज, तीव्र मंत्र ध्वनि और बिजली सी त्वरित चाल के साथ प्रस्तुत अपनी विमोहक भाव – भंगिमा में अद्‌भुत उपस्थिति लेकर दर्शकों के समक्ष उद्‌भाषित होता है ।तृतीय दिवस ,भोक्ता कलश के जल को समीप के तालाब – नदी में विसर्जित कर इस त्रीदिवसीय पूजन क्रिया के समापन का उपादान बन जाता है ।इस पूजन के दौरान अनेक भक्त नाक, जीभ में छोटे–छोटे त्रिशूल को बिंधवा लेते हैं। निज गात्र को कष्ट ताप में तपाकर इंदुशेखर की आर्शीमयी शीतलता से अनुग्रहित होना एकमेव उद्देश्य है – हरिभक्तों का।

यह संपूर्ण पूजन प्रक्रिया उन्हीं गांवो में आयोजित होती है, जहां देवस्थल कैलाशपति को समर्पित हैं। इन ग्रामीण देवस्थलों का स्थापत्य भिन्न स्वरूप लिए हुए हैं। कोई भी आयोजन माता लक्ष्मी की कृपा बिन संभव है क्या? इसलिए आयोजक ग्राम के प्रत्येक गृह से 200– 500 रुपए तक की राशि चंदे के रूप में एकत्रित होती है। शायद राशि इससे अधिक भी हो सकती है, क्योंकि छऊ नृत्य मंडली को मोटी राशि का भुगतान करना होता है।

जनश्रुतिनुसार इस परंपरा की शुरुआत नागवंशी राजाओं ने की थी। पौराणिक कथानुसार मंडा पूजा भगवान भोलेशंकर की प्रथम अर्द्धांगिनी सती के बलिदान की याद में की जाती है। मंडा पूजा करनेवाले भक्त इसे माता सती का आशीर्वाद मानते हैं। संस्कृति और आस्था, त्याग और विश्वास का महायोग है– माण्डा।

'शिवस्याराधनां यस्मिन् श्रद्धया त्यागपूर्वकम।
विश्वासोत्पादकः यज्ञः तन्मण्डा इति कथ्यते।।'

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन की मासिक ई–पत्रिका

क्या आपकी लेखन में अभिरुचि है?

क्या आप भी कभी अपने विचारों, भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कागज – कलम उठाते हैं?
क्या आप लेखक/लेखिका, कवि/कवियत्री है?

आपको **अध्यात्म संदेश** ई पत्रिका की ओर से आमंत्रण है, आप अपनी रचनाएं, कविताएं, गीत, लघु कथाएं हमें प्रेषित करें। आपकी रचनांए आलेख प्रकाशन योग्य होने पर उसका पत्रिका में अवश्य प्रकाशन किया जाएगा।

अपनी रचनायें हमें प्रेषित करते समय यह अवश्य सुनिश्चित करें कि यह रचना आपकी अपनी मौलिक कृति है और न तो यह किसी पत्र – पत्रिका – पुस्तक – ब्लॉग – वेबसाइट आदि में प्रकाशनार्थ विचाराधीन है और न ही कभी प्रकाशित हुई है।

आपकी रचना को मूल रूप में प्रकाशित/संपादित रूप में प्रकाशित करने अथवा प्रकाशित न करने का पूर्ण विवेकाधिकार संपादक मंडल का है।

आलेख भेजने की अंतिम तिथि 15 जून 2023

विशेष : शब्द सीमा 500–750 शब्दों के मध्य होनी चाहिए

1. लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाइल में टाइप कराकर ही भेजे। पी. डी. एफ फाइल न भेजें।
2. लेखक/लेखिका अपनी स्वरचित अप्रकाशित एवं मौलिक रचना के साथ कृपया अपना संक्षिप्त परिचय, व्हाट्सप नंबर, फोटो के साथ भेजें ।
3. आपकी स्वीकृत रचना आपके फोटो के साथ प्रकाशित की जायेगी। प्रकाशित रचना पर पारिश्रमिक देय नहीं है।
4. जनकल्याण हित में ज्ञान वर्धन हेतु यह ई पत्रिका पूर्णतः निः शुल्क है। अपनी रचनाएँ ई–मेलः **editor.adhyatmsandesh@gmail.com** पर प्रेषित करें।

– योगी शिवनन्दन नाथ
प्रधान संपादक

कुशल प्रशासक लोक माता-अहिल्याबाई

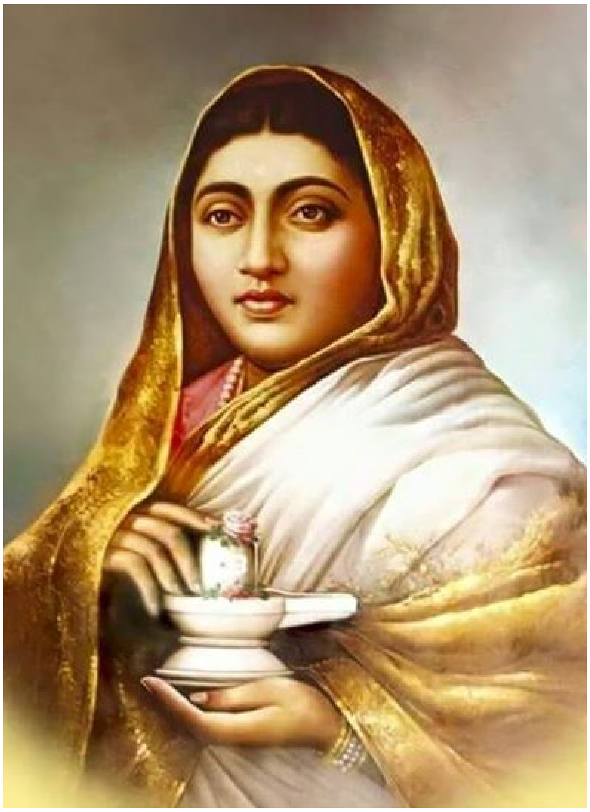

भावना दामले
स्वतंत्र लेखन
इंदौर (मध्य प्रदेश)

हमारा महान देश भारतवर्ष वीरों तथा वीरांगनाओं का देश है। जो देश के लिए अपना सर्वस्व बलिदान करने के लिए तत्पर रहते हैं। इन सबके लिए देश सर्वोपरि है स वीरता, शौर्य, साहस तथा देशभक्ति इनके जीवन का ध्येय रहा है। परोपकार के हेतु अपना जीवन लगा देते हैं। मैं और मेरा के भाव से ऊपर उठ कर हम और हमारा की वृत्ति से कार्य कर समाज सेवा का व्रत लेकर जनता के हृदय में अपना स्थान बना लेते हैं। ऐसे ही महान व्यक्तियों का नाम इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित हो जाता है। इसमें प्रमुख नाम है अहिल्याबाई होळकर का।

अहिल्या बाई का जन्म महाराष्ट्र के अहमदनगर में चौंडीग्राम में सन 1725 को हुआ, था। इनके पिता माणकोजी शिंदे गांव के पाटिल थे। इनकी माता धार्मिक विचारों वाली महिला थी। अहिल्याबाई का विवाह प्रसिद्ध सूबेदार मल्हारराव होलकर के पुत्र खंडेराव से हुआ। इनके पुत्र का नाम मालेराव तथा पुत्री का नाम मुक्ताबाई था। एक युद्ध में अहिल्याबाई के पति खंडेराव को युद्ध में वीरगति प्राप्त होने पर ससुर मल्हारराव के कहने पर अहिल्याबाई सती नहीं हुई। अहिल्याबाई की होशियारी, कुशाग्र बुद्धि, साहस तथा चतुराई को देखकर उनके ससुर मल्हारराव ने उनको शिक्षा दी। यह उस दौर में महिला सशक्तिकरण की एक अनूठी मिसाल थी। अहिल्याबाई होळकर उन रानियों में से एक थी जो सैनिक शक्ति से लेकर राजकीय कार्यो में भी बहुत अच्छी थी। मल्हारराव होलकर की मृत्यु के पश्चात काफी संघर्ष के साथ उन्होंने राज्य की बागडोर संभाली। काफी सूझबूझ से अपने राज्य को बाहरी आक्रमण से बचाया।

अहिल्याबाई का सारा जीवन वैराग्य, कर्तव्य पालन और परमार्थ की साधना बन गया। अहिल्याबाई भगवान शिव की बड़ी भक्त थी। उनके पूजन के बिना पानी तक नहीं पीती थी। उन्होंने सारा राज्य भगवान शंकर को समर्पित कर रखा था। वह उनकी सेविका बनकर शासन चलाती थी। राजामुद्राओं पर हस्ताक्षर करते समय अपना नाम नहीं लिख कर नीचे केवल

श्रीशंकर लिख देती थी।

अहिल्याबाई ने महेश्वर, इंदौर तथा देश में अनेक स्थानों पर मंदिरों का निर्माण करवाया। आम जनता के लिए धर्मशालाऐं बनवाई जो प्रमुख तीर्थ स्थानों जैसे गुजरात में द्वारिका वाराणसी में गंगा घाट आदि पर हैं। अहिल्याबाई ने विभिन्न प्रकार के निर्माण कार्य करवाए, जैसे – चित्रकूट में भगवान श्री रामचंद्र की प्राण प्रतिष्ठा, एलोरा में लाल पत्थर का घृष्णेश्वर मंदिर, गया में विष्णुपद मंदिर, ;षिकेश में कई मंदिर और घाट, गोवर्धन में राम मंदिर, जेजुरी में मल्हार गुप्तेश्वर मंदिर, विट्ठल मंदिर, मार्तंड मंदिर आदि मंदिरों का निर्माण करवाया। इंदौर में कई मंदिरों तथा घाटों का निर्माण करवाया।

अहिल्याबाई ने अपने शासनकाल में महेश्वर में कपड़ा उद्योग की स्थापना की। यह महेश्वरी साड़ियां पूरे भारत में प्रसिद्ध है। अहिल्याबाई ने व्यापार को प्रोत्साहित किया व्यापारियों और किसानों के हित में कार्य किए। अहिल्याबाई ने अनेक कारीगरों मूर्तिकारों तथा कलाकारों को प्रोत्साहन दिया, जो भवनों तथा किलो में काम करने आए थे और जिन्होंने महेश्वर को अपना घर बनाया था। अहिल्याबाई ने प्रजा के लिए अहितकर कानूनों को हटा दिया तथा अनेक नए कानून भी बनाए। उन्होंने निसंतान विधवाओं को दत्तक पुत्र लेने का और अपने धन का उपयोग करने का नया कानून बनाया। अहिल्याबाई ने प्रजा की भलाई हेतु अनेक करों को कम कर दिया था। महेश्वर अपने समय के दौरान साहित्य और कला का केंद्र बन गया था। अहिल्याबाई ने कई मंदिरों का जीर्णोद्धार करवाया और बहुत सारी जगह पर अन्न क्षेत्र तथा प्याऊ का निर्माण करवाया। अहिल्याबाई ने नारी जाति के साथ–साथ संपूर्ण मानव जाति के उत्थान के लिए कार्य किए। वह उज्जवल चरित्र वाली पतिव्रता नारी और उदार विचारों वाली महिला थी। वह मातृभूमि की सच्ची सेविका थी। उदारता उनमें भरी थी। उनका रहन–सहन बिल्कुल सादा था।

महाराष्ट्र के संगमनेर नगर का कवि अनंत फंदी नाच गाकर 'लावणी' सुनाया करता था। अहिल्याबाई की प्रसिद्धि सुनकर उनसे कुछ दान पाने की अभिलाषा से वह महेश्वर के लिए चल पड़ता है। रास्ते में सतपुड़ा पहाड़ में भील लोग उसे लूटकर कैद कर लेते हैं। भीलो के सरदार के पास ले जाते हैं। वह 'लावणी' गाना सुनाता है। गाना सुनकर सरदार प्रसन्न हो जाता है। 4–5 भीलो को साथ करके उसे सुरक्षित महेश्वर पहुंचा देता है। अहिल्याबाई के समक्ष कवि शृंगार रस की कविता सुनाकर उपहार प्राप्त करता है। अहिल्याबाई उसे समझा कर कहती है कि श्रृंगार रस के बदले भक्ति रस का काव्य सुनाओगे तो लोगों का हित होगा और तुम्हारा परलोक भी सुधरेगा।

अहिल्याबाई के उच्च चारित्रिक गुणों के कारण उन्हें लोकमाता कहा जाता है और यह पूर्ण रूप से सही भी है। उन्होंने हमेशा ही एक माता के समान राज्य की तथा जनता की देखभाल की और सेवा की। उन्होंने कभी किसी को मृत्युदंड नहीं दिया। 7/12 स्कीम चलाई, जहां किसानों को खेती के लिए राज्य सहायता करता था। उन्होंने राज्य के कई कर समाप्त किए जिससे मालवा एक समृद्ध राज्य बन गया था। अहिल्याबाई एक ऐसी शासिका थी जिन्हें सत्ता से लोभ नहीं था, वे राज्य की समृद्धि पर जोर देती थी।

उनका जीवन चरित्र हम सभी नागरिकों को हमेशा वंदनीय तथा अनुकरणीय रहा है और रहेगा ही। अहिल्याबाई होकर की स्मृति को कायम रखने के लिए उनके सम्मान में सरकार ने एक डाक टिकिट जारी किया। उनके नाम से एक पुरस्कार स्थापित किया। असाधारण कृतित्व के लिए यह पुरस्कार दिया जाता है। इंदौर स्थित हवाई अड्डे का नाम 'देवी अहिल्याबाई होळकर हवाई अड्डा' कर दिया स इंदौर के विश्वविद्यालय का नाम 'देवी अहिल्या विश्वविद्यालय' कर दिया गया है।

श्रीराम चरण वन्दना

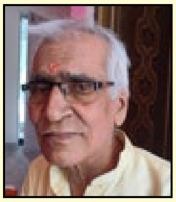

ब्रह्मेश्वर नाथ मिश्र
स्वतंत्र लेखन
बिहार

बंदउँ श्री रघुबीर युगल चरना ।
जेहि चरनन दशरथ के प्यारे ,
खेलत फिरत भवन अँगना ।
बंदउँ श्री रघुबीर..........
जेहि चरनन मिथिला पति धोए ,
सिया संग शोभे जनक अँगना ।
बंदउँ श्री रघुबीर..........
जेहि चरनन बन बन में भटके ,
धावत देखि कनक हिरना ।
बंदउँ श्री रघुबीर..........
जेहि चरनन मारुत सुत सेवत ,
निरखि निरखि के जुड़ावे नयना ।
बंदउँ श्री रघुबीर..........
जेहि चरनन सिय हिय में धारे ,
निशि दिन जपत रहत बनमा ।
बंदउँ श्री रघुबीर..........

......गतांक से आगे

सुंदरकाण्ड में निहित प्रतीकार्थ की सुंदरता

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

अचानक हनुमान की दृष्टि एक अलग ही भवन पर पड़ी। यह भवन रामभक्त विभीषण का है –

भवन एक पुनि दीख सुहावा। हरि मंदिर तहँ भिन्न बनावा।।
रामायुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाइ।
नव तुलसिका बृंद तहँ देखि हरष कपिराइ।। 5/5/4–5 दोहा

इससे स्पष्ट है कि विभीषण का भवन रावण के महल के समीप था, लेकिन वहाँ का वातावरण बड़ा पुनीत और सात्विक था जिसे देखकर हनुमान को आनन्द मिला। यह महल राम जी के आयुधों के चिह्नों से अंकित था। वहाँ नवीन–नवीन तुलसी के वृक्ष–समूहों को देखकर कपिराज हनुमान जी अत्यंत हर्षित हुए। रावण की लंका में पूजा–पाठ, तुलसीबृंद देखकर आश्चर्य होना स्वाभाविक है। रावण के भय से शुभ आचरण कोई नहीं करता था, पर विभीषण को यह छूट कैसे? इसका समाधान यह है कि विभीषण रावण का अत्यंत स्नेह भाजन था। दूसरा उसे ब्रह्मा से हरिभक्ति का वरदान मिला था। अतएव भजन उसका नित्यकर्म था। हनुमान जी असमंजस में हैं भक्त को इस स्थिति में देखकर प्रभु ने कृपा की। भगवान की प्रेरणा से विभीषण जाग गए। विभीषण और हनुमान दोनों एक दूसरे को मिलकर आनंद में डूब जाते हैं। विभीषण हनुमान से वह सब कथा कहते हैं जिस प्रकार सीता अशोक वाटिका में रहती हैं। विभीषण से हनुमान जी बड़ी विनम्रता से माँ जानकी जी के दर्शनों की अभिलाषा रखते हैं। विभीषण उन्हें युक्ति बताते हैं। अशोक उपवन ऐसी युक्ति से बना था कि रावण के

जीते जी कोई उसमें प्रवेश नहीं कर सकता था। अतः उसके भीतर प्रवेश करने की युक्ति विभीषण ने बताई, जिससे बिना बाधा के सुरक्षित ढंग से सीता के दर्शन हो सकें। विभीषण से विदा लेकर हनुमान मसक का रूप बनाकर अशोक वन में सीता के पास पहुँचते हैं। मन ही मन उन्हें प्रणाम करते हैं। बंदिनी रूप में सीता जी की उस दीन एवं शोकग्रस्त स्थिति को देखकर वह अत्यंत व्याकुल हो जाते हैं। ध्यान और शोकपरायण होने से उनका शरीर सूख गया है किंतु वचन राम–नाम में लगा था। मन को रामचरण में लीन किए है। इस विश्वास के साथ कि राम आएंगे –

कृस तनु सीस जटा एक बेनी। जपति हृदय रघुपति गुन श्रेनी।।
निजपद नयन दिएँ मन राम पद कमल लीन।
परम दुखी भा पवनसुत देखि जानकी दीन।। 5/8/4–8 दोहा तक

इस प्रकार मन, वचन, कर्म से श्रीराम के चरणों में अनुरक्त है। प्रतीकार्थ अत्यंत गूढ़ गंभीर है। सीता भक्ति स्वरूपा है। अशोकवाटिका मोह की वाटिका है। भक्ति के लिए अपेक्षित यहाँ न तो भावना है न श्रद्धा और न विश्वास। इस सारी प्रतिकूलता में भक्ति देवी जीर्ण हो गई हैं। इस दीनता और जीर्णता को मिटाने का साधन तुलसीदास ने दिया भगवत्कथा, भगवद्गुणानुवाद जो हनुमान करते हैं। हनुमान वृक्ष पर बैठे हुए विचार करते हैं, उसी समय रावण मंदोदरी आदि अपनी रानियों के साथ आता है। सीता को साम–दाम, भेद और भय द्वारा अपनी ओर दृष्टि डालने को अनुरोध भरा प्रस्ताव करता है किंतु सीता अत्यंत अपमानसूचक शब्दों का प्रयोग करते हुए कहती हैं –

सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा। कबहुँ कि नलिनी करइ बिकासा।।
अस मन समुझु कहति जानकी। खल सुधि नहिं रघुबीर बान की।।
सठ सूनें हरि आनेहि मोही। अधम निलज्ज लाज नहिं तोही।।
5/9/4–5

मोह और कामग्रस्त रावण भक्ति–स्वरूपा सीता की कृपादृष्टि पाने में असमर्थ है किंतु उसी कृपादृष्टि को हनुमान जी सहज ही पा जाते हैं। उस कृपादृष्टि को पाने का उपाय भी तुलसीदास ने हमारे सम्मुख स्पष्ट कर दिया है। हनुमान उसी का आश्रय लेते हैं। वह माँ सीता की गोद में राम–नाम से अंकित अंगूठी डालकर राम गुणगान तथा भगवत्कथा सुनाकर उनका दुःख दूर कर उन्हें प्रसन्न करते हैं –

तब देखी मुद्रिका मनोहर। राम नाम अंकित अति सुंदर।।
चकित चितव मुंदरी पहचानी। हरष बिषाद हृदयँ अकुलानी।।.....
रामचन्द्र गुन बरनैं लागा। सुनतहिं सीता कर दुख भागा।।
लागीं सुनैं श्रवन मन लाई। आदिहु तें सब कथा सुनाई।।

5/13/1–4

भक्ति देवी की कृपा पाने के लिए जिस भगवद्नाम के आश्रय की आवश्यकता है हनुमान ने उसी का आश्रय लिया। रावण अपने धन–ऐश्वर्य द्वारा भक्ति को पाना चाहता है। भक्ति को आप अपनी सारी सम्पदा देकर भी प्राप्त नहीं कर सकते। रावण लंका का सारा वैभव सीता के चरणों में अर्पित करके भी उसे प्राप्त नहीं कर सका जबकि हनुमान जी ने राम–नाम अंकित मुद्रिका द्वारा उसे सहज ही प्राप्त कर लिया। तुलसीदास ने इस प्रसंग के द्वारा सुन्दरकांड की अन्य सुन्दर वस्तुओं/प्रसंगों और घटनाओं के साथ भगवद्नाम और भगवद्कथा को भी सुन्दर कहा है जिसका आश्रय लेकर हर प्रतिकूलता का सामना करते हुए भक्ति को सहज प्राप्त किया जा सकता है। जब कभी भी विपदा की विषम स्थिति हो, दुःख और संशय घेर लें तब मंगलमय भगवन्नाम का आश्रय विश्राम प्रदान करता है। इसी नाम का आश्रय लेकर हनुमान जी ने राम को भी वश में कर रखा है। यानि भक्ति और भगवान दोनों को इसी साधन के द्वारा पाया जा सकता है –

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखेउ रामू।।

सीता जी को हनुमान जी ने इसी नाम के बल पर अपने अनुकूल और प्रसन्न कर लिया। उन्होंने प्रसन्न चित्त से हनुमान जी से मुद्रिका ली और आशीर्वाद दिया –

आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना। होहु तात बलसील निधाना।।
अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।।

5/17/1–2

माँ का आशीर्वाद पाकर हनुमान अत्यंत प्रसन्न होते हैं। अब तक तो चिंता में थे लेकिन अब माँ से मिलकर उनका आशीर्वाद पाकर प्रसन्न होते हैं और अब उन्हें भूख भी लग जाती है। चिंता और दुःख में भूख–प्यास का भान भी कहाँ रहता है। जिस कार्य को करने हनुमान जी लंका में आए हैं वह कार्य भगवद्कृपा से पूर्ण हो गया। अब उन्हें भूख का भान होता है। वह माँ से अशोक वाटिका में फलों को तोड़कर खाने की आज्ञा माँगते हैं और उन्हें मिल जाती है –

रघुपति चरन हृदयँ धरि तात मधुर फल खाहु।। 5/17 दोहा।

तुलसीदास ने यहाँ सूत्र दिया, यद्यपि यह वाटिका मोह की है। इस मोह–वाटिका में मधुर फल भी मिलेंगे लेकिन सावधानीपूर्वक इन्हें खाना। यदि संसार में रहते हुए उसकी माया में रहते हुए व्यक्ति भगवद्नाम का आश्रय लेता है तो मोह उसे प्रभावित नहीं कर पाएगा। जैसे हनुमान को प्रभावित नहीं कर पाया। हनुमान जी वाटिका में प्रवेश करते हैं जो अत्यंत सुंदर है। इस वाटिका को हनुमान जी उजाड़ देते हैं और लंका को जला देते हैं। यद्यपि अशोकवाटिका अत्यंत सुंदर है किंतु यह अशोकवाटिका रावण की है और रावण मूर्तिमान मोह है। हनुमान जी ने उस वाटिका के वृक्षों को उखाड़ दिया है। मोह की वाटिका बाहर से चाहे अत्यंत सुंदर प्रतीत होती है किंतु दुःखदायी है। संसार की वाटिका कभी अशोक नहीं हो सकती। यह विरोधाभास है। वस्तुतः संसार शोक का सागर है। अतः नष्ट करने योग्य है। रामचरितमानस में मोह की बड़ी निंदा की गई है। विनयपत्रिका के अनेक पदों में भी मोहादि के रूप में दुर्गुणों की निंदा मिलती है। रावण की सोने की लंका है। लंका में अनेक राक्षसियाँ है। ये राक्षसियाँ दुष्वृत्तियों का प्रतीक हैं। तुलसीदास ने इस प्रसंग के माध्यम से संकेत दिया है कि हमारे जीवन में मोह की वाटिका जो देखने में सुंदर है यदि उजड़ जाए और दुष्वृत्तियों की लंका जल जाए तभी भक्ति स्वरूपा माँ के चरणों में प्रणाम करने की सार्थकता है।

क्रमशः

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन
www.gssfoundation.org
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र

गतिशील जीवन शैली का विशुद्ध व्यावहारिक स्वरूप

डॉ. अजय शुक्ला
गोल्ड मेडलिस्ट इंटरनेशनल ह्यूमन राइट्स
मिलेनियम अवार्ड
डायरेक्टर, स्प्रीचुअल रिसर्च
स्टडी एंड एजुकेशनल ट्रेनिंग सेंटर
देवास, मध्य प्रदेश

" चेतना से चिंतन की ओर मुखरित प्राणी जगत ने जहां सर्वप्रथम चेतना की सुप्तावस्था अर्थात पाषाण के प्रति अपनी श्रद्धा, आस्था एवं मान्यता पूज्य स्वरूप में व्यक्त की, वहीं पेड़ – पौधों अर्थात वृक्ष के पवित्रतम स्वरूप की अभिवृद्धि को जीवंत स्वरूप में चेतना की जागृति के साथ, समादर भाव भी अभिव्यक्त किया गया और जीव– जंतुओं में चेतना की गतिशीलता को जीवन की नवीनता के सानिध्य स्वरूप में स्वीकार करने के साथ ही मानवीय चेतना को चिंतन की श्रेष्ठता के प्रति अत्यंत सहजता के साथ नैसर्गिक रूप से अभिप्रेरित हो जाने की स्थितियां निर्मित हो गई क्योंकि मानवीय चेतना ने ही उत्कृष्ट चिंतन के माध्यम से प्रकृति से जीवंत संबंध निर्मित करने हेतु भावनात्मक अर्थात पूज्य स्वरूप के आशीष में गरिमामई अभिव्यक्ति प्रदान की थी। जीव जगत का प्रकृति से नैसर्गिक जुड़ाव आदि काल से ही रहा है क्योंकि मनुष्यता और उससे संबद्ध, सभ्यता की भूमिका निभाने में प्रकृति का विराटता से युक्त नैसर्गिक संदर्भ एवं प्रसंग में अति महत्वपूर्ण योगदान सदा से ही अछुण्य रूप में विद्यमान रहा है । मानव जीवन के प्रति सम्मानजनक दृष्टिकोण का प्रथम आयाम स्वीकार्य होने पर – ' जीवात्मा की बोधगम्यता का वास्तविक यथार्थ आत्म हित' के साथ व्यक्तिगत आदर एवं सत्कार के रूप में अनुभव द्वारा प्राप्त होता है जिससे निसर्ग के प्रति व्यावहारिक रूप से गहन अनुराग स्वयं ही विकसित हो जाता है। पंच तत्व से निर्मित प्रकृति के रहस्य को समझने में दक्ष मानव जाति सदा ही प्रकृति की विराटता से संबंध रखते हुए स्वयं की शारीरिक संरचना को सक्षम ' बनाने हेतु अंतःकरण से ' सृजनात्मक समझ के साथ संतुलित व्यवहार के द्वारा सुदृढ़ सामंजस्य ' को विशुद्ध स्वरूप से स्थापित करने में संलग्न रहती है।"

नैसर्गिक स्वरूप के विभिन्न जीवन उपयोगी पक्ष : संपूर्ण जीवन काल में जब साधना के मार्ग पर व्यक्ति अग्रसर होता है तब – ' साधक स्वयं को साध्य तक पहुंचाने के लिए शरीर रूपी साधन की पवित्रता के धर्म ... ' को पूरी तरह से निभाता है जिसमें जीवात्मा के माध्यम से – ' गौरवान्वित नैसर्गिक स्वरूप के विभिन्न जीवन उपयोगी पक्ष पूर्णरूपेण स्पष्टता ... ' से परिलक्षित होते रहते हैं ।

आत्म कल्याण से जुड़े हुए सभी संदर्भ और प्रसंग के उदाहरण– ' स्वयं को परिमार्जित तथा परिष्कृत करने से संबंधित ... ' होते हैं जिसमें – ' परिवर्तन संसार का अनिवार्य तथा महत्वपूर्ण नियम है ... ' जिसे अत्यधिक सहजता एवं सरलता के स्वरूप में स्वीकार करते हुए – प्रकृति के नियमों पर आधारित जीवन को भाव और विचार जगत से आत्मसात करना आवश्यक होता है । जीवन की उच्चतम स्थितियों के सानिध्य में गतिशील सर्व मानव आत्माओं ने स्वयं को साधने के लिए आत्मा के – ' स्वमान, स्वरूप तथा आत्मिक निजी स्वभाव की धारणात्मक मनोवृति ... ' को सदा से ही अनुकरण किया है जो उनकी – ' ज्ञानार्जन के प्रति व्यक्तिगत रूप से अगाध निष्ठा का सुखद ... ' परिणाम है ।

प्रकृति के सानिध्य द्वारा गतिशील जीवन शैली : कर्म क्षेत्र की वास्तविक स्थिति शरीर एवं आत्मा के संतुलन द्वारा ही सुनिश्चित हो पाती है जिसमें – ' निरोगी काया के माध्यम से सुख और आत्मगत चेतना के पुरुषार्थ से आत्मिक शांति...' की प्राप्ति निर्धारित होती है जो – ' श्रेष्ठ संकल्प की सकारात्मकता से श्रेष्ठ विकल्प की सार्थकता ... ' को सिद्ध करने में पूर्ण सक्षमता के साथ समर्थ होती है। चेतना की चौतन्यता को जीवन का महत्वपूर्ण आधार बनाकर , ज्ञान – बोध , योग – सत्कर्म , धारणा – अनुसरण , सेवा – परोपकार , क्षमा – कल्याण , तथा आत्मिक – समृद्धि को प्राप्त करने हेतु – ' मानव सेवा से माधव सेवा का महामंत्र ...' प्रकृति के सानिध्य द्वारा गतिशील जीवन शैली को व्यवहारिक स्वरूप में प्रतिबिंबित करते हुए – ' प्रकृति के नियमों पर आधारित सुखी जीवन को सक्षम एवं समर्थ पुरुषार्थ ...' की प्रासंगिकता के लिए प्रतिपादित किया जा सकता है ।ऽ

जीवात्मा की बोधगम्यता एवं निसर्ग से अनुराग : आत्म चेतना के विकास अनुक्रम में जीवात्मा की बोधगम्यता का यथार्थ– ' बड़े भाग्य मानुष तन पावा ...' से आरंभ होता हुआ गतिशील रहता है जिसमें – ' स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ आत्मा का निवास होता है ...' सत्यता की इस वास्तविक पृष्ठभूमि को मानव जाति, जीवन पर्यत स्वीकारते हुए अनुभवी बन जाती है। प्रकृति के पंच तत्वों में संपूर्ण जीवन काल के अंतर्गत – 'श्रद्धा, आस्था एवं मान्यता का स्वरूप ...' सदा ही पूजनीय स्थितियों में विद्यमान रहता है जो मनुष्य को निसर्ग के प्रति गहनतम अनुराग से संबद्ध कर देता है और अंततः आत्मीय अंतरसंबंधों की सुखद परिणीति का महत्वपूर्ण आधार स्तंभ बन जाता है।

संपूर्ण प्रकृतिगत संरचना और सृजनात्मक समझ : मानवीय चित और चरित्र के श्रेष्ठतम सामंजस्य से – ' पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश...' से निर्मित संपूर्ण प्रकृति और मनुष्य की शारीरिक संरचना का सकारात्मक सह – संबंध मानव जीवन को सदैव 'प्रकृति की ओर, लौट चलने का आह्वान...' करता रहा है।

जीवन की गतिशीलता में मनुष्य की खोजपूर्ण ' वृत्ति , प्रवृत्ति तथा मनोवृति ...' के कारण ही संपूर्ण व्यक्तित्व ' मन , वचन एवं कर्म ...' के प्रति सृजनात्मक समझ और सुदृढ़ सामंजस्य का संतुलित निर्माण सुनिश्चित हो सका है जो 'जीवात्मा को गरिमामय जीवन जीने के लिए...' अनुप्राणित करने में मददगार भूमिका निभाता है ।

साधन की पवित्रता तथा जीवात्मा का स्वरूप : साधना के क्षेत्र में साधक के समक्ष – ' महान साध्य की जीवंत उपस्थिति, साधन की पवित्रता के धर्म ... ' पर विशेष बल देती है जिसके कारण आत्मा के – ' पवित्रतम स्वरूप की महानतम उपलब्धिपूर्ण प्राप्ति , आत्मानुभूति... ' के माध्यम से इसी जन्म में होने से 'तपस्वी मानव आत्माएं शेष जीवनकाल का शुद्ध उपयोग करने हेतु सदैव सजगता के साथ पुरुषार्थ करती रहती हैं। आत्मगत स्वमान के प्रति संपूर्ण समर्पण के साथ जीवात्मा पूर्णतरू परमात्मा से संबंध स्थापित करके ही चेतना 'आत्मज्ञान, सुख, शांति, आनंद, प्रेम, पवित्रता एवं शक्ति की उच्चतम अनुभूति ...' से नैसर्गिक रूप में अर्थात – ' अनादि , आदि , पूज्य , ब्राह्मण और फरिश्ता स्वरूप के आत्मिक ...' अभ्यास से जीवात्मा का गौरवान्वित, नैसर्गिक स्वरूप विराटता के सानिध्य में प्रकट होता है।

परिवर्तन का नियम एवं प्रकृति आधारित जीवन : मानव जाति के समक्ष सर्वाधिक वृहद चुनौती– 'किसी भी नवीन परिवर्तनकारी व्यवस्था को भले ही वह आत्म हित से जुड़ी...' हो उसे स्वीकार करने की होती है जिसमें– 'परिवर्तन संसार का अति महत्वपूर्ण नियम है... ' यह सत्य मनुष्य के द्वारा स्वयं जानने और उसे पूरी तरह से मानने के अनुभवी दौर से नित – नूतन रूप में व्यक्ति स्वयं ही गुजरता रहता है। नैसर्गिक जीवन की सत्यता से साक्षात्कार हो जाने पर बहुआयामी – 'व्यक्तित्व, कृतित्व एवं अस्तित्व के धनी , मानवीय संवेदनशील पृष्ठभूमि ...' में जीवंत रूप से संबद्ध व्यक्तियों द्वारा – ' प्रकृति के नियमों पर आधारित जीवन शैली का अनुकरण...' और अनुसरण होने के कारण 'निरोगी काया अर्थात शारीरिक , मानसिक तथा आत्मिक शक्तियों... की अनुभूति का स्वरूप सर्व मानव आत्माओं के लिए प्रेरणादाई स्वरूप में निर्मित हो जाता है।

आत्मा का स्वभाव और ज्ञानार्जन की निष्ठा : आध्यात्मिक क्षेत्र की उच्चता हेतु स्वयं को समर्पित करने में , समर्थ मानव आत्माओं ने भी यह स्वीकार किया है कि – ष् आत्मिक निजी स्वभाव की उपलब्धि , नियम – संयम , जप – तप , ध्यान – धारणा , स्वाध्याय – सत्य , प्रेम – अहिंसा , धर्म – कर्म , अध्यात्म – पुरुषार्थ, राजयोग– मौन को आत्मसात करके ही उन्होंने सर्वधर्म – समभाव , बहुजन हिताय – बहुजन सुखाय , सर्वे भवंतू सुखिनः और वसुधैव कुटुंबकम ... ष् की व्यवहारिकता को प्राप्त करने में महानता का मुकाम हासिल किया है। जीवन में समयानुसार आवश्यक परिवर्तन के साथ – ' अनिवार्य एवं उपयोगी बदलाव सदा ही व्यक्ति के लिए मददगार सिद्ध हुए हैं ... ' क्योंकि मानव जाति ने सदा से ही नवीनतम ज्ञान अर्जन के प्रति व्यक्तिगत निष्ठा को अभिव्यक्त करके 'श्रद्धावान लभते ज्ञानम् ... ' के मूल मंत्र को साकार करने की पहल की है इसलिए सृष्टि पर ' मातृ देवो भवरू, पितृ देवो भवरू, आचार्य देवो भवरू , सत्यं वद , धर्म चर ... ' के सिद्धांत एवं व्यवहार फलीभूत स्वरूप में विकसित होकर, मानव जाति का समग्रता के साथ – उत्थान एवं कल्याण करने में सफल सिद्ध हो सके हैं ।

निरोगी काया सुख तथा श्रेष्ठतम संकल्प विकल्प : प्रकृति के सानिध्य में गतिशील जीवन शैली के व्यवहारिक स्वरूप को अपनाने हेतु – ष सेवा अस्माकं धर्मः , के सानिध्य द्वारा सृजनात्मक स्वरूप के माध्यम से अनुभव युक्त प्रकृति के नियमों पर आधारित, रोग – चिकित्सक – दवा – मुक्त, जीवन से संबंधित साहित्य... ष का पठन – पाठन तथा मनन – चिंतन अर्थात संपूर्ण रूप से परायण करके एक सामान्य व्यक्ति भी दैनिक जीवन के आचरण में पूर्णता के साथ लागू करके – ' निरोगी काया से सुख प्राप्ति.. ' को संपूर्ण रुप से सुनिश्चित कर सकता है । व्यवहारिक जीवन के परिदृश्य में – ' श्रेष्ठतम संकल्प द्वारा श्रेष्ठतम विकल्प ... ' का आशावाद संपूर्ण व्यक्तित्व को सहजता से – ' सकारात्मक जीवन से सार्थक जीवन की ओर ... ' गतिशील कर देने में सक्षम होता है जिसकी परिणति दुर्लभ मानव जीवन के लिए – प्रकृति की ओर पुनः लौट आने का आह्वान से संबद्ध चिंतन ही ' प्रकृति के नियमों पर आधारित , सरल , सुलभ और व्यवहारिक समाधान के रूप में एक वैचारिक क्रांति का अग्रदूत बनकर रोग – चिकित्सक – दवा – मुक्त अभियान ...' का श्रेष्ठतम स्वरूप धारण करके, मानव जीवन के लिए वरदानी और उपयोगी मार्गदर्शक के रूप में निश्चित ही सुविकसित हो जाता है।

मानव सेवा से माधव सेवा का सन्मार्ग : मानव सेवा से माधव सेवा के पवित्र संकल्प द्वारा – 'स्वस्थ जीवन शैली के वैकल्पिक उपाय को विधिवत एवं न्याय संगत स्वरूप में सृजन धर्म ... ' का निर्वहन करते हुए स्वयं प्रकृति ने ही संपूर्ण मानव जाति को प्राकृतिक एवं आयुर्वेदिक पद्धति से मार्गदर्शन एवं परामर्श और उपचार हेतु मददगार भूमिका निभाते हुए ... ष अनुभव युक्त उपयुक्त व्यवहारिक सलाह के साथ निजी स्तर पर जीवन के लिए अति उपयोगी – ' सहृदय रूप में अनेकानेक पीड़ित व्यक्तियों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सदा ही सहयोग भी प्रदान किया है जिसके परिणाम , अत्यंत ही संतोषजनक तथा सुखी जीवन की प्राप्ति समस्त जीव – जगत द्वारा सहज रूप ... ' से स्वीकार की गई है । अतः प्रकृति प्रदत्त दातापन की नैसर्गिकता , उदारता के संदर्भ एवं प्रसंग में व्यावहारिक अभिव्यक्ति के माध्यम से – ष प्रकृति के नियमों पर आधारित रोग – चिकित्सक – दवा मुक्त जीवन...ष संपूर्ण मानवता के लिए हितकारी , कल्याणकारी एवं मंगलकारी स्वरूप का पर्याय बन जाने की प्रासंगिकता में नित्य – नूतन रूप से संलग्न रहते हुए प्रकृति की संपूर्ण नैसर्गिक पवित्रता , प्राणी मात्र के लिए नवजीवन का आधार स्तंभ बनकर पुनर्जीवन स्वरूप द्वारा अतीत , आगत एवं अनंत की व्यापक संभावनाओं के सानिध्य में आज भी निरंतर रूप से गतिमान बनी हुई है ।

जनक नंदिनी

डॉ. सुमन मिश्रा
स्वतंत्र लेखन
झांसी

हे जनक नंदनी जग जननी, तुम रघुकुल का आभूषण हो।
हे आदि शक्ति मां जगदंबे, तुम ही नारी का भूषण हो।।

था धनुष यज्ञ में हे सीते, रघुपति ने तुमको वरण किया।
जो वचन दिये थे तुमने मां, था उनका ही अनुकरण किया।।।

पति धर्म किसे कहते माते, यह तुमने जग को सिखलाया।
तुम रही राम की अनुगामी, कितना भी दुर्गम पथ आया।।

बेटी भार्या माँ बन करके, सम्बंधो का श्रृंगार किया।
कर्तब्य मार्ग दिखलाकर मां, हर नारी पर उपकार किया।।

रावण जब मद में चूर हुआ, माँ सीते तेरा हरण किया।
पर मूर्ख समझ वह कब पाया, था स्वयं मृत्यु का वरण किया।।

जब प्रभु ने अग्नि परीक्षा ली, ज्वाला भी तुमसे हारी थी।
जो पावनता थी तेरी माँ, वह उस पर ही वलिहारी थी।।

इस धरती पर तेरा माते, है नाम अमर आदर्शो में।
रघुवर का मान सदा करके,जीवन काटा संघर्षो में।।

युग – युग तक तेरा वैदेही, इस वसुधा पर अभिनंदन है।
जब तक सुधांशु रवि है नभ में, जग श्सुमनश करे मां वंदन है।।

बेशक हर दिन अच्छा नहीं होता, लेकिन हर दिन कुछ ना कुछ अच्छा जरूर होता है।

स्थायी स्तम्भ

......गतांक से आगे

महत्त चिंतन श्रृंखला

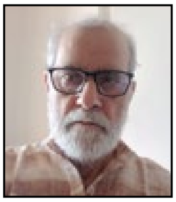

विजय कुमार तिवारी
(कवि, लेखक, कहानीकार, उपन्यासकार, समीक्षक)
भुवनेश्वर, उडीसा

हमारे सारे रिश्ते इन्हीं लेन–देन के अधीन कर्म–व्यवहार करते हैं और अपना–अपना हिसाब चुकता करते रहते हैं। माता–पिता, बहन–भाई, पति–पत्नी, पुत्र–पुत्री, पड़ोसी, मित्र, बन्धु–बान्धव,आसपास की वनस्पतियाँ,पेड़–पौधे,जीव–जन्तु,कीड़े–मकोड़े,पालतू गाय–भैंसें, कुत्ते–बिल्लियाँ सभी की आत्मायें तभी हमसे मिलती हैं जिनका हमारे उपर लेन–देन शेष है और चुकाने का समय आ गया है।

ऋण चुकाने की कुछ मान्यतायें हैं। जो ऋण है वही चुकाना है। यदि प्रेम का ऋण है तो प्रेम चुकाना होगा। गाली ऋण है तो गाली मिलेगी। सेवा ऋण है तो सेवा करनी होगी। मजेदार बात यह है कि चुकाने वाला सक्षम होता है ताकि जो ऋण है उसे चुका सके। हमारे सारे सम्बन्ध इसी लिये हैं और माया के इस रहस्य को हम समझ नहीं पाते।

एक बच्चा हमारे घर में तभी जन्म लेता है जब उसका ऋण चुकाने का समय आ गया है। माता–पिता,भाई–बहन सभी उसकी सेवा में लगे रहते हैं और अपना–अपना देना देते रहते हैं। वह भी अपना देना देता है। हर सम्बन्ध इसी लेन–देन में चलता है।

समझदार लोग धैर्य पूर्वक देना शुरु कर देते हैं और नया कोई ऋण अपने उपर नहीं आने देते। कोई आपको दुखी कर रहा है, गाली दे रहा है तो सहन करना चाहिए। तभी तक वह दुखी करता रहेगा,जब तक उसके ऋण की पूर्ण वसूली नहीं हो जाती। दुख है तो समझ लेना चाहिए कि वसूली हो रही है और आप को मुक्ति मिलने वाली है। धैर्य से भगवान का सहारा लेकर उस स्थिति से निकलना चाहिए।

जब से इस रहस्य को मैंने समझा है, मेरा जीवन सरल हो गया है। जब ज्ञात है कि इस प्राणी को किसी जन्म में मैंने दुख दिया है, और आज वही भोगना पड़ रहा है तो किसे शिकायत रह जायेगी, किसको दोष दीजियेगा? इसी लिए संत–महात्मा कहते हैं कि हम ही अपने सुखों और दुखों के कारण हैं।

आजकल बहुत लोग मुझसे मिलते हैं और नाना तरह से प्रश्न करते हैं। यथार्थ को समझने के बजाय उनकी कोशिश रहती है कि मुझे गलत प्रमाणित करें। मुझे खुशी होती है और हँसी भी आती है। खुश इसलिए होता हूँ कि लोगों को विचार करते देखता हूँ, चिन्तन–मनन करते देखता हूँ। यही तरीका है कि हम सत्य तक पहुँच सकते हैं।

मेरा कोई दावा नहीं है कि जो कह रहा हूँ वही सत्य है। मुझे इतना ही कहना है कि मैंने

ऐसा ही अनुभव किया है और सत्य पाया है। इस चिन्तन ने मुझे बहुत सुकून और शान्ति दी है,मेरे लगभग सारे प्रश्नों के समाधान मिले हैं। आज मैं बहुत सी समस्याओं से अत्यन्त सहजता और सरलता से मुक्ति पा लेता हूँ जिसमें तमाम लोग उलझे दिखते हैं और दुखी रहते हैं।

हमें अपने स्तर पर सजग होना है और उन उद्वेलनों को नियन्त्रित करना है जिनके प्रभाव में आकर हम दूसरों के साथ नकारात्मक या अमानवीय व्यवहार करते हैं। संसार में हैं तो सम्बन्ध रहेंगे ही। हमें अच्छे सम्बन्ध के लिए प्रयास करना चाहिए। हालांकि अच्छे सम्बन्धों के लिए भी पुनः जन्म लेना ही पड़ता है। संत जन कहते हैं, हमें सहज सामान्य होना चाहिए ताकि किसी का ऋण, अच्छा या बुरा, हमारी आत्मा पर न चढ़े। दूसरों को पीड़ित करने के पहले स्वयं को उस मन:स्थिति में ले जाना पड़ता है। पहले हम स्वयं को पीड़ित करते हैं क्योंकि सारी भावनायें हमारे भीतर क्रियाशील होती हैं। यदि नकारात्मक सोच है तो पहले हमारे भीतर की सम्पूर्ण व्यवस्था प्रभावित होती है। कभी–कभी ऐसा भी होता है कि सारा दुष्प्रभाव हमारे उपर ही होकर रह जाता है। सामने वाले का कुछ नहीं होता। यदि दूसरा व्यक्ति सजग है तो हमारे सारे प्रयास के बावजूद बचा रहता है।

ऐसे में ऋण हमारी ही आत्मा पर चढ़ कर रह जाता है, जो आज भी दुखी कर रहा है और भविष्य में या अगले जन्मों तक करता रहेगा। हमें ऐसा कुछ भी नहीं करना चाहिए जो हमारा वर्तमान भी बिगाड़े और भविष्य भी। ऋण सिद्धान्त को समझकर हर प्राणी को ऋण–मुक्त रहने का प्रयास करना चाहिए क्योंकि ऋण में जीना सबसे बड़ा दुख माना गया है। इस तरह हमारे सारे सम्बन्ध ऋण के हैं और हमें दुखी करते रहते हैं। हमें इससे मुक्ति के उपाय में लग जाना चाहिए और ऋण–मुक्त जीवन जीना चाहिए।

3– हमारे ऋण और हमारे भोग : समझने और अनुभव करने के लिए यहाँ दो बातें हैं। हमारे सनातन ग्रंथों में इसकी विशद विवेचना की गयी है, सद्पुरुषों ने अपने प्रवचनों, उपदेशों में बार–बार व्याख्या की है और प्रायः सभी प्रबुद्धजन समझते हैं, उसका अनुपालन करते है। समस्या उनकी है जो समझते नहीं, समझना चाहते नहीं। यदि थोड़ा–बहुत समझ गये, तो उस ज्ञान को अपने जीवन में उतारते नहीं,लागू नहीं करते। हमें हमेशा उन शक्तियों को पहचानने की कोशिश करनी चाहिए जिनके अधीन हम और हमारा जीवन संचालित है।

सामान्य भाषा में देखें तो, हमारे उपर सबसे पहले ईश्वर का संविधान लागू होता है। उसके बाद संसार का,फिर देश का, राज्य का,स्थानीय व्यवस्थाओं का, शहर,गाँव का,घर का और अंत में हमारा अपना संविधान हमारे उपर लागू होता है। इसमें से कुछ संविधान मानक के रुप में लिखे हुए हैं, कुछ परम्परा से चले आ रहे हैं, कुछ नियम–कानून ऐसे हैं जिन्हें हमारे उपर लादा गया है और कुछ हम स्वयं ओढ़े रहते हैं। सभी संविधानों व व्यवस्थाओं के पीछे नियामक शक्तियाँ हैं और उनके अधीन हर व्यक्ति को, हर प्राणी को चलना पड़ता है, कोई भाग नहीं सकता। स्थिति तब विचित्र और भयावह हो जाती है जब कोई अपने भीतर विरोध या विद्रोह की भावनाओं को प्रश्रय देना शुरु करता है।

संसार कर्म प्रधान है, हमें कर्म करना है। कर्म का दायरा विस्तृत है। हमारा सारा व्यवहार, सोच–विचार, चाहे मानसिक चिन्तन के स्तर पर हो या प्रत्यक्षतः किया गया हो, सभी कर्म है। हम निष्क्रिय,सरल शांत हैं,वह भी हमारा कर्म है। सुबह उठते हैं, सक्रिय होकर नाना तरह के कर्मो में लग जाते हैं, ऐसे कर्मो का प्रभाव साथ–साथ मिलता हुआ दिखाई देता है। आलस्य और प्रमाद में निष्क्रिय पड़े रहते हैं, तो उन कर्मो का प्रभाव भी हमारे मन,शरीर और चिन्तन पर पड़ता है।

ईश्वर की व्यवस्था में हमारे प्रत्येक कर्म का फल सुनिश्चित है। उस कर्मफल– प्राप्ति से कोई बच नहीं सकता। जो सुख भोगते हैं या दुख भोगते हैं वे सभी हमारे पूर्वकृत कर्मों के फल हैं। कर्म करते समय पता नहीं रहता कि इसका फल कब मिलेगा। अधिकांश लोग ऐसा, न मानते हैं, न जानते हैं, बस मन की भावनाओं के अनुरूप संलग्न रहते हैं और भविष्य का सुख–दुख बढ़ाते रहते हैं। सुख–भोग की स्थिति में किसी को, कोई समस्या नहीं होती, बल्कि बहुतायत लोग स्वच्छंद आचरण में लगे रहते हैं। खलील जिब्रान कहा करते थे, स्वादिष्ट भोजन करते समय हम सुख अनुभव करते हैं और खुश होते हैं, हमारा तद्जनित दु:ख पलंग पर प्रतीक्षा कर रहा होता है।

केवल ईश्वर को ही पता होता है कि हमारे किस कर्म का फल, क्या होने वाला है, कब मिलने वाला है, अभी मिलेगा, इसी जन्म में मिलेगा या किन्हीं अगले जन्मों में मिलेगा। अच्छा चिन्तन, अच्छी सोच अच्छे कर्म, तो प्रतिफल भी अच्छा। बुरा चिन्तन, बुरी सोच, बुरे कर्म, तो प्रतिफल भी बुरा। यह ईश्वर की सामान्य व्यवस्था है। हर प्राणी अपनी परिस्थितियों,आवश्यकताओं और अपने संस्कारों के अनुसार कर्म करता चलता है। तदनुसार ही सुख–दुख भोगता रहता है। कुछ फल तत्काल मिलते हैं, कुछ प्रतिफलों की आयु लम्बी होती है और कुछ कर्म–भोग तो जन्म–जन्मांतर तक पीछा नहीं छोड़ते। इसीलिए संत–महात्मा कर्म–योनि व भोग–योनि दा. `नों से हमारे जन्म–मरण को जोड़ते है। हम कर्म करने के लिए स्वतन्त्र हैं तो उसका प्रतिफल भोगने के लिए बाध्य भी हैं। ईश्वर की बहुआयामी व्यवस्था है, हमें साथ–साथ अनुकूल–प्रतिकूल परिस्थितियाँ मिलती हैं और साथ–साथ सुख–दुख मिलते हैं। इस रहस्य को लोग समझ नहीं पाते और दुखी होते रहते हैं। हम अपने सुख,अनुकूल परिस्थितियों और आनंद के क्षणों के लिए कभी चिन्तन नहीं करते और ईश्वर का धन्यवाद भी नहीं करते। हम दुखद स्थितियों के लिए हाय–तौबा मचाते हैं,आसमान सिर पर उठा लेते हैं और सम्पूर्ण परिस्थितियों को भयावह और जटिल बना लेते हैं। ऐसे में ईश्वर की भर्त्सना करने और दूसरों को दोषी मानने से भी नहीं चूकते। हमारा ज्ञान व विवेक लुप्त हो जाता है। हम दुखों के अनेक कारण पैदा करते जाते हैं और भविष्य में दुखी होने की स्वयं सारी व्यवस्था कर लेते हैं। कठिन,विपरीत परिस्थितियों में मनुष्य को धैर्य रखना चाहिए, थोड़ा अधिक चिन्तन–मनन करना चाहिए और उस जटिल स्थिति से निकलने का प्रयास करना चाहिए।

क्रमशः

घातक है शारीरिक श्रम की उपेक्षा

डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम
स्वतंत्र लेखन
योग. प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ
(आयुर्वेद रत्न)
कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश

जन–स्वास्थ्य की दृष्टि से अपने देश की हालत सबसे दयनीय है जबकि राष्ट्रीय स्वतंत्रता के बाद स्थिति उसके ठीक विपरीत होनी चाहिए थी। चिकित्सा के क्षेत्र में नवीनतम शोधों, निरंतर चल रहे अन्वेषणात्मक प्रयासों और चमत्कारी औषधियों के आविष्कारों के चलते मृत्यु दर में निश्चित रूप से कमी आई है और आयु दर भी बड़ी है। किंतु इसके साथ ही विलासितापूर्ण जीवन के लिए आवश्यक सुख–सुविधाओं के बढ़ने से मनुष्य की शारीरिक क्षमता भी उसी अनुपात में घटी है।

आज का मनुष्य शारीरिक दृष्टि से उतना सबल नहीं है, उतना मेहनती नहीं है जितना कल था। परिश्रम करने की आदत से उसे एलर्जी है और इसके कुपरिणामस्वरूप जो समां बन रहा है उसमें किसी शायर का यह कलाम विशेष अर्थ रखने लगा है– 'फर्श मखमल पर मेरे पांव छिले जाते हैं'। नई पीढ़ी का जीवन आलस्यपूर्ण बनता जा रहा है और आज का युवक न तो स्वयं मेहनत करना चाहता है, न अपने बच्चों को मेहनती बनाने के लिए प्रयास कर रहा है। व्यायाम, कसरत, संयमित जीवन, समय पर सोना, उठना और काम में लग जाने की प्राचीन मान्यताओं को आज की पीढ़ी नकार रही है और वही जड़ में है जन–स्वास्थ्य की चिन्तनीय स्थिति के। आज मनुष्य केवल अपनी बात सोचता है और समाज के प्रति बिल्कुल उदासीन बन बैठा है।

कल का मनुष्य जहां अपनी चिंता करता था, वही उसकी समाज चेतना भी कम नहीं थी। वह स्वयं साफ रहता था और पास–पड़ोस को भी साफ रखना चाहता था। अतीत के दिनों में इसीलिए उसे जलवायु, सड़कें, नालियां, पेय जल सब कुछ स्वच्छ मिल जाता था। आदर्श जन–स्वास्थ्य तभी रह भी सकता है जब वह उभयपक्षीय हो, चिंता हमको अपनी भी हो और दूसरों की भी। हमारी सुविधाभोगी मानसिकता हमें लगातार अंधकार की ओर ले

जा रही है। आज जो सबसे बड़ा खतरा है, इससे उबरने के लिए हमको पुनः मुड़ना होगा उन अभ्यासों को की ओर जो कल का युगबोध रहा है, शुद्ध मूल्य रहा है। आदि काल से मनुष्य शारीरिक श्रम करता आ रहा है। जंगलों में शिकार, खेतों में श्रम, एक जगह से दूसरी जगह पैदल जाना, नदी में नाव खेना आदि उसकी सक्रियता रही है जैसे जैसे सभ्यता का विकास होता गया और गांव बसने लगे तो हाथ चक्की से आटा पीसना, कुएं से पानी भरना, ईधन बटोरना और लकड़ी काटना, घर्षण से आग पैदा करना आदि उसकी दिनचर्या थी।

मशीनी युग आने पर श्रम से बचने के लिए आटा चक्की, साइकिल, रेलों का प्रयोग बढ़ा। 19वीं सदी के पूवार्द्ध में मोटर के बन जाने से न केवल धनी वर्ग ही शारीरिक श्रम से विरक्त हुआ परंतु मध्य शताब्दी तक आते–आते यह सारी सुविधाएं जन साधारण को उपलब्ध हुई तो उसने हाथ–पैर चलाने की प्राकृ. तिक आवश्यकता को न केवल नकार दिया वरन नए–नए ऐसे आविष्कार होने लगे कि केवल बटन दबाने से ही सारे काम हो जाएं। सुविधाभोगी संस्कृति का विकास हुआ और त्वरित भोजन (फास्ट फूड) की सभ्यता आई। दिन भर के शारीरिक कार्य एकाध घंटे में समाप्त होने लगे तो बाकी के 23 घंटे मनुष्य अपने आराम तथा मनोरंजन के साधनों में व्यतीत करने लगा। कालांतर में विज्ञापन के युग का प्रारंभ हुआ और सत्यनिष्ठ, आत्मपरायता, निष्ठावान संस्कृति की बजाय उपभोक्ता संस्कृति का बोलबाला हो गया परंतु प्रकृति का नियम तो सब पर एक–सा लागू होता है। शारीरिक श्रम न करने के कारण हार्ट अटैक, उच्च रक्तचाप, मधुमेह, हड्डियों की कमजोरी, बृहत आंत का कैंसर एवं घबराहट, उदासी जैसे मानसिक रोग अधिक हो रहे हैं। सर्वेक्षणों से पाया गया कि जो सतत शारीरिक श्रम करते रहते हैं उनमें यह रोग नहीं के बराबर होते हैं। श्रमशील लोगों में हार्ट अटैक बहुत ही कम होता है। मनुष्य की आयु कम करने के जितने भी कारण हैं उन सब में है शारीरिक श्रम की कमी।

आज के युग में श्रम कैसे हो, यह सबसे विचारणीय प्रश्न है। जगह–जगह 'जिम' खुल रहे हैं जिनमें कठोर व्यायाम किए जा सकते हैं। लेकिन यह सबकी पहुंच के बाहर है। इनके लिए कहा जाता है कि व्यायाम द्वारा पहले भूख बढ़ाइए और गरिष्ठ भोजन करिए, फिर इन 'जिमो' में जाकर व्यायाम द्वारा वजन कम करिए। यह विडंबना नहीं है तो और क्या है। व्यायाम शनैः–शनैः ही बढ़ना चाहिए और अपनी क्षमता का परीक्षण पहले दिन ही नहीं करना चाहिए। यदि जोश में आकर कोई अनभ्यस्त व्यक्ति ज्यादा तेजी और अधिक देर तक व्यायाम करे तो चोट–चपेट लगने के अलावा आकस्मिक निधन की भी आशंका रहती है। स्वस्थ रहने के लिए व्यायाम सहज, स्वाभाविक और सरल होना चाहिए। पैदल चलना सबसे स्वाभाविक है जिसे कहीं सीखने की आवश्यकता नहीं है। अपने दैनिक क्रिया–कलापों में इतना पैदल चलना हो जाए कि अलग से व्यायाम की आवश्यकता न पड़े। जहां पैदल जा सकते हैं, वहां ईधन से चलने वाली सवारी का प्रयोग न करें। खेलकूद आसान हों, स्पर्धाजनक नहीं होनी चाहिए। इनमें यह देखने की आवश्यकता है कि श्रम हो और उसमें आनंद भी आए। स्वयं खेल में भाग लेने की बजाय लोग टी.वी. पर खेल देखकर ही रह जाते हैं। दूसरों को खेलते देखना ही मनोरंजन का साधन बन गया है। इनसे प्रेरणा तो बिरले ही लेते हैं। व्यक्तिगत और स्वान्तः सुखाय खेल खेलने में जमीन–आसमान का अंतर है।

पश्चिमी देशों में तो 'खेलों का आयुर्वेद' अलग ही हो गया है। सर्वसाधारण के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह स्पर्धाजनक खेल खेलें। आज साधारणतया हृदयरोग विशेषज्ञों की मान्यता है कि शारीरिक व्यायाम यदि नियमित रूप से केवल 30 मिनट का भी प्रतिदिन हो तो हृदय रोग मनुष्य से दूर रह सकते हैं। ऐसे साक्ष्य है कि 24 घंटे में यदि 30 मिनट से कम भी शारीरिक श्रम किया जाए तो भी निश्चित लाभ होता है। पैदल चलने के अलावा दंड–बैठक साइकिल चलाना, बागवानी आदि हाबी की तरह यदि मनुष्य करने लगे तो स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक श्रम अपने आप ही हो जाता है। अपने यहां प्रातः घूमने की प्रथा काफी प्रचलित रही है। हमारे पूर्वजों ने धर्म के साथ बांध कर इसे बाध्यकर बना दिया था। जैसे गंगा नहाने पैदल जाना, मंदिर में दर्शन करना, गाय की रोटी खिलाने जाना आदि को नियमित आचरण बताया गया और यह सब प्रकारान्तर से व्यायाम ही था। पश्चिमी उपभोक्ता संस्कृति से उसे समाप्त कर दिया। रात भर टी.वी. देखने के बाद सुबह उठ जाना संभव नहीं, फिर समय से काम पर पहुंचने के लिए व्यायाम, पूजा–पाठ को बंद करके ही समय पर पहुंचा जा सकता है। इसीलिए यह प्रथा बंद–सी हो गई। आज की नई पीढ़ी आलस्य में जकड़ी हुई है। उसे भविष्य में स्वास्थ्य में होने वाली भयंकर हानि का अंदाजा ही नहीं है। धर्म न सही, वैज्ञानिक मान्यता को मानकर ही नियमित व्यायाम या श्रम करें। इसके लिए व्यक्तिगत और सामूहिक प्रयासों की अत्यंत आवश्यकता है।

सामूहिक प्रयासों में सबसे जरूरी है कि घूमने के लिए हर कालोनी में पार्क हो और उनके किनारे चलने की पट्टियां हों। सड़कों पर पैदल और साइकिल वालों के लिए अलग स्थान हो जिन पर निर्धारित लोग चल सकें। आज तो पैदल चलने पर यही डर रहता है कि कब कौन टक्टर मार देगा और हड्डी टूट जाने का दुर्योग आ जाएगा, फिर बढ़ती आबादी से सड़कें सिकुड़ती जा रही हैं। सार्वजनिक सुविधाएं जैसे–स्वच्छ जल, अच्छी–साफ चौड़ी सड़कें, हर कालोनी में हरे–भरे पार्क, नियमित स्थानों पर कूड़े का ढेर एवं उनके निरंतर उठाए जाने की व्यवस्था, सीवरों की सफाई आदि होनी चाहिए जिससे सीवरों का पानी लौट कर सड़कों पर न फैले, मवेशियों को खुला सड़कों पर न छोड़े, सुलभ शौचालय हों ताकि सड़क के किनारे मल–मूत्र न करें।

यह दुर्भाग्य है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के 75 वर्ष बाद भी समाज में गंदगी, दुर्गति कम होने की बजाय बढ़ी ही है। कब शासन, प्रशासन, नगरपालिकाओं और नागरिकों को इनके प्रति जागरूक होने की सुधि आएगी ? व्यक्तिगत प्रयासों में आवश्यक है कि शारीरिक सक्रियता की अहम् भूमिका के प्रति लोगों में जानकारी बढ़े और वह स्वस्थ रहने के प्रति जागरूक हो। हमारा नारा हो 'दैनिक क्रियाकलापों में शारीरिक श्रम'। ■

लिव इन रिलेशनशिप

डॉ. अर्चना प्रकाश
स्वतंत्र लेखन
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

लिव इन रिलेशनशिप एक ऐसी व्यवस्था है, जिसमें दो लोग स्त्री व पुरुष जिनका विवाह नहीं हुआ है, एक साथ रहते हैं और पति पत्नी की तरह आपस मे शारीरिक सम्बन्ध बनाते हैं। ये सम्बन्ध पूर्णतया समयानुकूल एवम आवश्यकतानुसार होते हैं। कई बार ये सम्बन्ध लंबे समय तक चलते हैं और कभी अस्थाई भी होते हैं।

महानगरों में लिव इन रिलेशनशिप की शुरुआत शिक्षत और आर्थिक रूप से सम्पन्न ऐसे लोगों ने की जो विवाह से छुटकारा चाहते थे। क्यों कि विवाह में स्त्री व पुरुष दोनों का साथ व सम्मान निहित है। ये एक ऐसा रिश्ता होता है जिसमें दो लोग सिर्फ भावनाओं से जुड़ते हैं। कोई भी सामाजिक या कानूनी मोहर नहीं होती। आज भारत मे तीस से चालीस प्रतिशत ऐसे रिश्ते हैं।

यहाँ प्रश्न है कि यदि विवाहितों की तरह ही रहना है तो विवाह क्यों नही कर लेते। क्योंकि ये रिलेशनशिप पूरी तरह अमानवीय व अनैतिक है।

हमारे समाज में वैध विवाह के बाद भी कई युवतियां दहेज यातना व घरेलू हिंसा का शिकार ही नही होती, वरन उन्हें जलाया या मार दिया जाता है ।ऐसे में ये मानना असम्भव है कि लिव इन में उसके साथ धोखा नहीं हो गा ।सन 2010 में सुप्रीम कोर्ट ने लिव इन रिलेशनशिप के विषय मे दिए गए फैसले में कहा था कि –केवल एक दूसरे के साथ रहने या रात गुजरने भर से इसे घरेलू सम्बन्ध नहीं कहा जा सकता पिछले अनेक वर्षो में भारत के अनेक महानगरों में लिव इन रिलेशनशिप का चलन तेजी से बढ़ा है।

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन
www.gssfoundation.org
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र

आधुनिकता की भेंट चढ़ते भारतीय समाज मे लिव इन के गम्भीर परिणामों को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता एक उदाहरण टी एम सी सांसद नुसरत जहाँ व निखिल जैन का है। जिसमे नुसरत जहाँ ने दावा किया है कि उनकी शादी लिव इन रिलेशनशिप का नतीजा है। उनका विवाह अंतर्धार्मिक था। लेकिन पिछले छह माह से दोनों अलग रह रहे हैं ।

भारतीय समाज में सम्बन्धों का सदैव विशेष महत्व रहा है। लेकिन आज महिलाएं भी पुरुषों की तरह ही सक्षम व सशक्त है। आजीविका के लिए उन्हें एक शहर से दुसरेशहर में डेरा जमाना पड़ता है। ऐसे में बढ़ती महंगाई के चलते साझेदारी ही विकल्प बचते हैं ,और व्यय का बटवारा भी किसी को बोझ नहीं लगता। लेकिन ऐसे रिश्तों को कानूनी मान्यता होने पर भी समाज नही मानता। अपितु ऐसे रिश्तों को और ऐसे रिश्तों का निर्वाह कर रहे लोगो को भारतीय समाज गलत नजरों से देखता है। जिन सम्बन्धों को पारिवारिक व सामाजिक मान्यता नहीं मिलती उसके टूटने का खामियाजा भी केवल महिलाओं को ही भुगतना पड़ता है। क्योंकि महिलाएं पुरुषों की अपेकक्षाकृत अधिक ही संवेदनशील होती हैं। हमारा समाज ऐसी महिलाओं को सम्मान से नहीं देखता, जिससे उसे मानसिक आघात पहुँचता है। दूसरी ओर उसके चरित्र हनन की पीड़ा उसे जीते जी मार देती है। महाराष्ट्र और पुणे में ऐसे किस्से ज्यादा है, इसीलिए महाराष्ट्र सरकार ने लिवइन रिलेशनशिप प्रस्ताव पारित किया है, लेकिन उसमें भी अनेक त्रुटियां हैं ।बहुत सी ऐसी महिलाएं भी हैं जो अपने कैरियर को प्राथमिकता देते हुए शादी जैसी महत्वपूर्ण जिम्मेदारी से बचना चाहती हैं। ऐसे में उन महिलाओं के हितों कोभी नकारा नहीं जा सकता जो किसी के बहकावे में आ करझूठे फरेबी रिश्तों की भेंट चढ़ जाती हैं। ऐसे रिश्तों की ख्याति जंगल में आग की तरह फैलती है। जिसका युवा पीढ़ी पर बहुत बुरा असर पड़ता है।

लिव इन रिलेशनशिप जैसे रिश्तों को मान्यता मिलने से भारतीय संस्कृति व मूल्यों को गहरा आघात लगा है। क्यों कि लिव इन के सत्तर प्रतिशत रिश्ते दो वर्ष की अवधि में ही ब्रेकअप की स्थिति में आ जाते हैं। ब्रेकअप के बाद इस रिश्ते से जन्मे बच्चों का कोई भविष्य नहीं रह जाता है। अपितु ऐसे बच्चें अनेक मनोविकारों से ग्रस्त होते हैं।

सुप्रीम कोर्ट अधिवक्ता अशोक अग्रवाल कहते हैं कि लिव इन रिलेशनशिप अब आम चलन में आ चुका है। सन 2013 में सुप्रीम कोर्ट ने ये आदेश दिया था कि लंबे समय से अपनी मर्जी से खुशहाल तरीके से रह रहे युवा लिव इन में रहने के लिये अब स्वतंत्र हैं। 9 अगस्त 2019 में सुप्रीम कोर्ट इसे कानूनी मान्यता देते हुए इंद्रा शर्मा व वी के वी शर्मा के मामले में कहा था – शादी करने या न करने और सेक्सुअल रिलेशनशिप बनाने का फैसला पूरी तरह से निजी है।

इसी प्रकार एडवोकेट वी के श्रीवास्तव का कहना है कि सी आर पी सी की धारा 125 के तहत महिला लिव इन पार्टनर से गुजारा भत्ता की मांग कर सकती है, लेकिन उसे पुरुष लिव इन की संपत्ति में कोई कानूनी अधिकार नहीं मिलता। अलग अलग देशों में लिव इन के अलग कानून हैं। संक्षेप में इतना ही कह सकते हैं की लिव इन रिलेशनशिप आज के युवा की आवश्यकता है जो स्त्री या पुरुष दोनों में से किसी पर कोई बंदिश नहीं लगाती, न तो शारीरिक न ही आर्थिक।

फिर भी भारतीय समाज मर्यादा एवम संस्कारो व परम्पराओं का समाज है। लिव इन रिलेशनशिप से समाज में एक प्रकार का जंगल राज उत्पन्न हो सकता है जिसमें न कोई जाति होगी न धर्म हो गा, न परिवार हो गा। क्योंकि परिवार के लिए माता पिता दोनों आवश्यक हैं।

इसीकारण ये कह सकते हैं कि लिव इन पूरी तरह से स्वार्थ लिप्सा एवम चालाकी के गुणों पर आधारित है जबकि समाज व परिवार के लिए त्याग कर्तव्यपरायणता,आपसी प्रेम व भाई चारा आवश्यक है। पत्नी पति के लिए, माँ सन्तान के लिए एवम पिता परिवार के लिए नि:स्वार्थ त्याग व अनेको कार्य करते हैं। सादर धन्यवाद। ■

सफ़लता का सफ़र

सुजाता प्रसाद
लेखिका,
शिक्षिका सनराइज एकेडमी
मोटिवेशनल ओरेटर
नई दिल्ली

सफलता का सफर भी किस कदर दुश्वार होता है,
न आसां होते हैं रास्ते, न मौसम खुशगवार होता है।
लक्ष्य का आगाज ही सफलता का आधार होता है
अगन – सी चाहत ही से इसका सरोकार होता है।
राह में मुश्किलों के मोड़ का अंबार होता है
अपने जूनून से प्यार ही पतवार होता है।

मिलती हैं कठिन राहें, इम्तिहां हर बार होता है
लगन ना हो तो हर हुनर बेकार होता है।

अभ्यास जिसे हो लहरों का मोती का वो हकदार होता है
गर हौसला हो साथ तो श्रम साकार होता है।

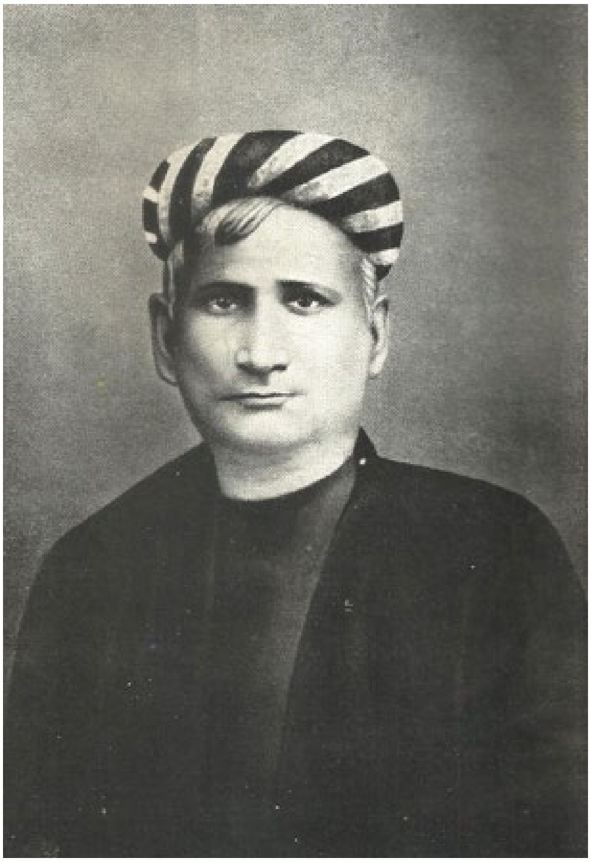

बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय

मेघना रॉय
शोधार्थी, सिद्धार्थ विश्वविद्यालय
सिद्धार्थ नगर, उत्तर प्रदेश

बंगाल नवजागरण के जनक या फिर यूं कहें कि आज का जो बंगला साहित्य है उसके उत्थान के प्रणेता जो कि उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से द्रष्टव्य होता है एक महानायक के रूप में साहित्यकार बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय मुखर हो उठते हैं। सम्भवतः इसके पहले बंगाल के साहित्यकार बंगला की जगह अंग्रेजी और संस्कृत भाषा में लिखना अधिक पसंद करते थे.... बंगला साहित्य को जनमानस में लोकप्रिय बनाने का श्रेय बंकिम बाबू को ही जाता है।

साहित्य के मर्मज्ञ प्रकांड विद्वान बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय जी का जन्म उत्तर चौबीस परगना के कंठालपाड़ा नौहाटी में एक परंपरागत और समृद्ध बंगाली परिवार में 27 जून वर्ष 1838 को हुआ था। इनकी शिक्षा हुगली कॉलेज और प्रेसीडेंसी कॉलेज में हुई। वर्ष 1857 में स्नातक की उपाधि प्राप्त करने वाले ये पहले भारतीय बने। तदोपरांत इनकी नियुक्ति डिप्टी मजिस्ट्रेट के पद पर हुई। कुछ काल तक ये बंगाल सरकार के सचिव पद पर भी कार्यरत रहे। राय बहादुर जैसी उपाधियां इन्हें प्राप्त हुई हैं। वर्ष 1869 में कानून की डिग्री हासिल कर इन्होंने सरकारी नौकरी कर लीऔर वर्ष1891 में सेवानिवृत्त हो गए।

इनकी शिक्षा बांगला भाषा के साथ – साथ संस्कृत और अंग्रेजी में भी हुई थी ... 27 वर्ष की अवस्था में वर्ष 1865 में 'दुर्गेश नंदिनी' लिखा। इनकी भाषा में राष्ट्रीयता व स्वभाषा प्रेम अनायास ही परिलक्षित हो जाती है। कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर साहित्यकार बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय को अपना गुरु मानते हैं तथा लिखते हैं कि ..... बंकिम बंगला लेखकों के गुरु और बंगला पाठकों के मित्र हैं। 'आनंद मठ' इनका सबसे प्रसिद्ध उपन्यास है – इसी में सर्वप्रथम 'वंदेमातरम' गीत प्रकाशित किया गया था। ऐतिहासिक और सामाजिक ताने – बाने से बुने हुए इस उपन्यास ने देश में राष्ट्रीयता की भावना जागृत करने में बहुत योगदान दिया था। यह राष्ट्रगीत एक ऐसी कृति है कि आज भी इसके प्रत्येक शब्द प्रत्येक भारतीय के हृदय को आन्दोलित करती है साथ ही रोम – रोम में वही रोमांच भरती है जिस रोमांच से रचनाकार ने इसकी रचना की थी। इसके अतिरिक्त भी इनकी अन्य प्रसिद्ध रचनाएं कपालकुंडला, देवी चौधरानी, विशवृक्ष आदि हैं।

ऐसे प्रकांड विद्वान, देदीप्यमान साहित्यकार, राष्ट्रगीत प्रणेता का नश्वर शरीर 8 अप्रैल वर्ष 1891 में पंचतत्व में विलीन हो कर भी अपनी लेखनी से आज के नये युग का पद प्रदर्शित कर रही है। साहित्याकाश का यह सूरज कभी भी अस्त नहीं होगा अपितु अपनी कृतियों के प्रकाश से सदैव प्रकाशित हो हम में और आप में विद्यमान रहेगा।

मृदु हृदय राम कृपाला

डॉ. सन्तोष खन्ना

(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
वरिष्ठ सम्पादक (अध्यात्म संदेश)
वरिष्ठ साहित्यकार एवं प्रधान संपादक : महिला विधि भारती त्रैमासिक पत्रिका
दिल्ली–110088

राम कथा मर्मज्ञ संत कवि गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में भगवान राम का जैसा चरित्र चित्रण किया है वह स्वयं में अनुपम, अद्वितीय और अनिवर्चनीय है। वाल्मीकि ने रामायण में राम को एक धीरोदात्त नायक के रुप में चित्रित किया किंतु तुलसीदास की लेखनी ने उन्हें इस सृष्टि का नियंता और अवतारी नायक का रुप दे दिया है और राम मर्यादा पुरुषोत्तम राम और भगवान दोनों रुपों में जन जन की मानसिकता में ऐसे समा गये हैं कि सदियों के अंतराल ने भी उन्हें जन मन से कोई दूर नहीं कर पाया है और कभी उन्हें दूर किया भी नहीं जा सकता है। भगवान रामजी का मानस में ऐसा उदात्त वर्णन है कि वे भारत के ही नहीं, वैश्विक स्तर पर भी एक प्रेरक व्यक्तित्व हैं। आम जन को उनके प्रेरक व्यक्तित्व से अनेक प्रकार की प्रेरणा मिलती है कि राम के प्रति अगाध श्रद्धा के बल पर वे जीवन के हर दु:ख और विपत्ति को सह जाते हैं। राम कहीं जागतिक पुरुष के रूप में अनुकरणीय मानव मूल्यों की स्थापना करते हैं तो कहीं वह भक्ति और आध्यात्म की अजस्र धारा बहाते हैं। तुलसीराम के राम भारतीय मानस में इतना रच बस गये है कि वह उनके श्वास श्वास में विद्यमान हैं और वह जब चाहे अपने दु:ख सुख में उनसे एकाकार हो जाते हैं।

भारतीय मानस राम के विश्वजनीन गुण, मर्यादा और आचरण को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से ओतप्रोत रहता हैं। तुलसी के राम मर्यादा पुरुषोत्तम तो हैं ही, वे 'निर्गुण और सगुण, व्यक्त और अव्यक्त, अंतर्यामी और बहिर्गामी, गुणातीत और गुणश्रय हैं।' इसलिए राम के चरित्र के संबंध में कहा गया है कि राम कथा भारत की आदि कथा है।

राम चरित मानस में राम अनेक गुणों की खान हैं क्योंकि वह भगवान हैं जिन्होंने मानवता

के हित साधन के लिए मनुष्य रूप धरा है। उनके गुणों की महिमा का बखान करना बहुत कठिन है। महाकवि तुलसीदास जब उनके गुणों का बखान करते हैं तो उनके दयालु, कृपालु, करुनाकर और सर्वहितकारी गुण को सबसे अधिक प्रभावी और प्रभविष्णुता लिए हुए बताते हैं। उनका कोमल हृदय और मृदु स्वभाव है इसलिए वह न केवल अपने भक्तों पर ही कृपा करते हैं अपितु वे अपने दुश्मनों के लिये भी करुण भाव से ओतप्रोत हैं ।

रामचरितमानस में उनकी दयालुता की पराकाष्ठा दिखाई गई है जब लंका काण्ड में राम – रावण युद्ध में असुरों के सिर प्रहार से रामचंद्र के चरणों पर आ कर गिरते हैं,वह चाहे असुर कितने ही पापी और ब्राह्मणों का मांस भक्षण करने वाले हैं परंतु राम इतने दयालु हैं कि उन्हें यह सोच कर अपने परम धाम भेजते जाते हैं कि चाहे अरि भाव से ही सही, वे राम का स्मरण तो करते हैं। जो परम कृपालु राम अपने दुश्मनों के प्रति ऐसा सद्भाव रखते हैं, उनके मन में अपने भक्तों के लिए करुणा का कितना पारावार होगा, उसकी कल्पना करना कठिन है। इस प्रसंग का रामचरित मानस के लण्का कांड में गोस्वामीजी तुलसीदास यों वर्णन करते हैं :

**'उमा राम मृदुचित करुनाकर
बदर भाव सुमिरत मोहि निसीचर
देहि परम गति सो जियं जानी
असकृपाल को कहहू भवानी।।'**

भगवान शिव कहते हैं, हे उमा! श्रीरामजी बड़े ही कोमल हृदय और करुणा की खान है। वे सोचते है कि राक्षस मुझे वैर भाव से ही सही, स्मरण तो करते ही है। ऐसा हृदय में जानकर वे उन्हें परमगति (मोक्ष) देते हैं। हे भवानी ! कहो तो ऐसे कृपालु (और) कौन है? प्रभु का ऐसा स्वभाव सुनकर भी जो मनुष्य भ्रम त्यागकर उनका भजन नही करते, वे अत्यंत मन्द बुद्धि और परम् भाग्यहीन है।

भगवान राम भक्त वत्सल भाव से अपने भक्तों के परम सहायक होते हैं, इसलिए जो भक्त भगवान राम के दयालु स्वभाव से परिचित हैं वे कभी राम से विमुख नहीं होते।

**'उमा राम सुभाउ जेहि जाना
ताहि भजन तजि भाव न आना।'**

भगवान राम के कोमल चित और मृदु स्वभाव के एक और प्रसंग पर आते हैं। राम सीता और लक्ष्मण बन बन भटकते हुए अंततः पंचकुटी में रहने लगते हैं। वही पर रहते हुए जब एक बार रावण की बहन सुर्पनखा वहां आती है और लक्ष्मण उसके नाक कान काट देते हैं तो वह अपने भाई रावण से जा कर उनकी शिकायत करती है। रावण बदला लेने के लिये राम की पत्नी सीता जी के अपहरण की योजना बनाता है। उसी योजना के अंतर्गत वह मरीच को सोने का मृग बना कर वहां भेजता है। जब सीता जी छद्म वेशधारी सोने के उस मृग को देखती हैं तो राम से उसे ला देने की जिद कर बैठती हैं। स्वर्ण मृग और कुछ नहीं हिरण का रूप धरे राक्षस मरीच था। जब राम उस मृग के पीछे जाते हैं तो वह स्वर्ण रुप धारी मरीच राम की आवाज में आरत स्वर में पुकारता है श्हा सीते! हा लक्ष्मण!

सीता उस करुण पुकार को सुनकर देवर लक्ष्मण को राम की सहायता के लिए जबरन भेज देती हैं। सीता के कटु वचनों के कारण लक्ष्मण को विवश हो जाना पड़ता है परंतु जाने से पहले वह कुटिया के चारों ओर एक सुरक्षा चक्र की व्यवस्था कर देते हैं जिसे लक्ष्मण रेखा कहा जाता है और सीता से कहते हैं कि वह किसी भी स्थिति में उस लक्ष्मण रेखा को लांघने का प्रयास नहीं करेंगी।

लक्ष्मण के प्रस्थान के पश्चात साधु वेश में रावण वहां प्रकट होता है और सीता से भिक्षा की मांग करता है और वह साधु भिक्षा के लिए सीता को लक्ष्मण रेखा से बाहर आने के लिए बाध्य कर देता है और जैसे ही भिक्षा देने के लिए सीता उस लक्ष्मण रेखा से बाहर आती है रावण उसका अपहरण कर लेता है। अपहरण के बाद रावण सीता को आकाश मार्ग से ले जाने लगता है तो रास्ते में सीता की चीख–पुकार जटायु को सुनाई देती है। जब उसे सीता के अपहरण का पता चलता है तो वह रावण को ललकार उठता है और उसके साथ उसका भीषण संग्राम होता है। उस संग्राम में रावण उसके पंख काट देता है और वह घायल हो पृथ्वी पर आ गिरता है।

उधर राम सीता को ढूंढते ढूंढते जब वहां आते हैं तो जटायु को घायल देख उससे बात करते हैं। जटायु उन्हें बताता है कि रावण माता सीता का अपहरण कर उसे दक्षिण दिशा में ले गया है। राम –जटायु संवाद में वह मुक्ति की चाहना करता है। जटायु की मृत्यु होने पर राम उसका विधिवत् रूप से दाह संस्कार करते हैं और उसे अपने परमधाम भेज देते हैं। इसी प्रसंग में जटायु राम की स्तुति करते हुए कहते हैं :–

**'कोमल चित अति दीन दयाला
कारण बिन रघुनाथ कृपाला
गीध अधम आमिष भोगी
गति दीन्हा जो जाचत जोगी।'**

जटायु भगवान राम की अनेक प्रकार से स्तुति करते हैं कहता है कि श्री रघुनाथ जी अत्यंत कोमल चित वाले और दीन दयालु हैं और बिना कारण वे उस पर असीम कृपा कर रहे हैं।वह आगे कहता है वह तो गीध पक्षी है जो मांस पक्षी है फिर भी करुणास्वरुप राम ने उन्हें मुक्ति प्रदान कर दी है ऐसी मुक्ति तो बड़े बड़े योगियों को नहीं मिलती, जिसे राम ने उसे प्रदान की है।

अगर हम शबरी प्रसंग को देखें, वहां भी भगवान राम का दयालु रुप प्रकट होता है। शबरी की भक्ति और प्रेमबस वह उसके जूठे बेर तक खाते हैं और शबरी को नवधा भक्ति के बारे में शिक्षित करते हैं जबकि शबरी कह उठती है:–

**'अधम ते अधम अति नारी
तिन्ह महँ मैं मतिमंद नारी
कह रघुपति सुन भामिनी बाता
मानुऊं एक भक्ति का नाता।'**

शबरी एक नीच जाति और मंद बुद्धि की नारी थी परंतु राम प्रभु दीन दयाल हैं उन्होंने शबरी को भी मुक्त कर दिया और कहा कि वह किसी की जाति नहीं देखते और न ही यह देखते कि वह कितनी गुणशीला है, उन्हें तो केवल भक्ति प्यारी है इसी प्रसंग में

तुलसीदास का यह दोहा देखिये, वह कह रहे हैं :–

'जाति हीन अघ जन्म महि मुक्त किन्हीं असि नारी,
महामंद मन सुख चहसि ऐसी प्रभु बिसारी।।'

तुलसीदास कहते हैं कि भगवान राम इतने दीन दयालु कृपालु हैं कि वे नीच ऊंच न देख भक्ति देखते हैं और मोक्ष प्रदान कर देते हैं, हे मतिमूढ मानव, तुम ऐसे प्रभु को बिसार कर सुख की कामना कर रहा है?

राम चरित मानस में ऐसे छोटे बड़े प्रसंगों की भरमार है जहां राम के इस दयालु स्वभाव का सुंदर और रचनात्मक ढंग से वर्णन किया गया है। शायद ही कोई अन्य साहित्यिक और आध्यात्मिक कृति है जिसमें राम के इस रुप की महिमा का इतना विविधतापूर्वक वर्णन है। भगवान राम गुणों की खान हैं और मर्यादा पुरुषोत्तम के रुप में उन्होंने संबधों के ऐसे मानक स्थापित किये हैं वह आज भी उतने ही प्रासंगिक है बल्कि वह आज और अधिक प्रासंगिक हो उठे हैं।

आज के युग में जब लोग धर्म कर्म भूल विषयों में अति आसक्त हो रहे हैं और मानवता और मानव मूल्यों को ताक पर रख पशुवत् जीवन जीने को अभिशप्त हो रहे हैं फिर भी वे राम की उदारता, दयालुता और उनके करुण रुप को भूले नहीं हैं। जहां जहां भी राम कथा होती है और राम कथा सदियों से हो रही है और वर्तमान समय में भी हो रही है जहां भी रामकथा होती है, लोग लाखों की संख्या में में एकत्रित हो उसे सुनते हैं और राम कथा श्रवण कर उसका सुख पाते हैं और वह आज भी इस बात पर विश्वास करते हैं जो रामचरितमानस में तुलसीदास ने राम की महिमा का वर्णन करते हुए कहा है कि :–

'भगत हेतु भगवान प्रभु राम धरयो तनु भूप, किए चरित्र पावन परम प्राप्त नर अनुरूप।'

राम ने भक्तों के हित को लिए राजा का शरीर धारण किया और अनेक असहनीय कष्ट सह कर भी साधारण मनुष्यों की भांति अनेक परम पावन चरित्र किए। रघुनाथ जी की यह लीला है जो राक्षसों को मोहित करने वाली और भक्तों को सुख देने वाली है लेकिन लोग मूर्खता वश राम को समझ नहीं पाते क्योंकि ऐसे मंदबुद्धि और अभागे जनों के हृदय पर अनेक प्रकार के अज्ञान के पर्दे पड़े होते हैं।

'ते सठ हठ बस संसय करहीं
निज अग्यान राम पर धरहीं।'

तुलसी दास जी कहते हैं कि ऐसे लोग मूर्खता और हठ से प्रेरित हो राम पर संदेह करते हैं और अपना अज्ञान रामजी पर आरोपित कर देते हैं। इस स्थिति को स्पष्ट करते हुए तुलसीदास जी यह भी कहते हैं कि :–

'सत्संग बिना विवेक न होई
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।'

जब तक राम की कृपा नहीं होती, तब तक राम की कृपा और अनुकंपा भी व्यक्ति को नहीं मिलती, इसलिए हम इस संदर्भ में भगवान् राम से हृदय और श्रद्धा भाव से प्रार्थना करते है कि,'हे भक्त वत्सल राम, कृपया जिन जिन अभागों को आप की दया का दान अभी तक नहीं मिला और वह अज्ञान रुपी अंधकार के कुएं में पड़े हैं और राम के अस्तित्व को नहीं मानते, उन पर भी आप अपनी कृपा करें ताकि ऐसे अभागे लोग आपकी दयालुता से वंचित न रह जाये।' जय श्रीराम।

चार पैसे वाला गणित

गोवर्धन दास बिन्नानी 'राजा बाबू'
बीकानेर

हमारे समय में 11वीं में बोर्ड की परीक्षा के बाद में ही कालेज दाखिला होता था । इसलिये नवीं में ही विज्ञान , वाणिज्य या कला संकाय में से एक पर सोच विचार कर निर्णय करना आवश्यक होता ताकि तीन साल बाद यानि ग्यारहवीं के बोर्ड परीक्षा बाद स्नातक वाली पढ़ाई उसी अनुरूप से पूरी की जा सके । सो मेरे प्रधानाध्यापक जी ने आठवीं में गणित वाले अच्छे परिणाम स्वरूप, मेरे बड़े भाई को समझा कर विज्ञान संकाय में मेरा दाखिला का आवेदन ले लिया । दस ग्यारह माह पश्चात एक दिन मेरी विज्ञान वाली पुस्तकों को देख पिताजी के ध्यान में आया कि मैं तो विज्ञान संकाय ले रखा है, सो विफर पड़े और कह दिया कि विज्ञान अपने काम की नहीं। वाणिज्य संकाय से पढ़ाई करनी है। ध्यान रखना चार पैसे जब पास में होंगे तभी यह दुनिया तुम्हारी कद्र करेगी । इसलिये चार पैसे कमाने पर ध्यान देना है। उस समय तो मैं यही समझा कि पढ़ाई के साथ कमाने का समझा रहे हैं।

लेकिन बाद में जब मैंने अपने परिवार के सम्बन्धियों के यहाँ भी बड़े बुजुर्गों को डाँट कर अपने से छोटों को कहते सुना कि चार पैसे कमाने अक्ल नहीं है। देर तक सोने में मन तो लगता है न ? तब चार पैसा वाली बात सुन बड़ा ही आश्चर्य हुआ और यह चार पैसा वाली गुत्थी को समझनें की ललक जागी ।

इसी बीच रास्ता पार करने के लिये जब सड़क पर खड़ा था तभी बगल में खड़े दो दोस्त आपस में बात कर रहे थे जहाँ एक कह रहा था 'सारी जिंदगी निकली जा रही है, कमाने में लेकिन अभी तक चार पैसे नहीं जुटा पाया हूँ', फिर जबाब में दूसरे ने कहा 'जब पढ़ने नहीं दिया हमें, इस जमाने ने, तो लगादी पूरी ताकत अपनी, हमने चार पैसा कमाने में'। यह वार्तालाप जब कान मे पड़ा जिसमें फिर चार पैसा सुनने मिला तब अपने घर पर पढ़ाने वाले शिक्षक से इस को समझाने का आग्रह किया ।

उन्होंने मुझे बताया कि उपरोक्त सभी में चार पैसा का प्रयोग एक कहावत की तरह हुआ है। फिर उन्होंने कहावत के बारे में बताते हुये बताया कि कहावतें प्रायः सांकेतिक रूप में होती

हैं यानि वो वाक्यांश जो ष्जीवन के दीर्घकाल के अनुभवों को छोटे वाक्य में कह कर आपको समझा देती हैं।ष

इसके बाद उन्होनें यह भी बताया कि 'चार' शब्द से हमारे यहाँ अनेक मुहावरे बहुत ही प्रयोग में लाए जाते हैं जैसे चार पैसे कमाओगे, तब समझ में आयेगा.. के अलावा चार लोग क्या कहेंगे...., चार दिन की चांदनी फिर अंधेरी रात...,

चार सौ बीसी करना...., वगैरह वगैरह। उन्होनें यह भी बताया कि अनेक तरह के अर्थो को समझाती अनेक कहावतें हमारी संस्कृति में उपलब्ध है। मैं एक एक कर सभी का मतलब समझा दूँगा। लेकिन अभी चार पैसे कमाओगे, तब समझ में आयेगा.. वाले अखाणे कहावत, का मायने विस्तार से समझ लो। उनके द्वारा समझाया गया मतलब को मैं यहाँ आप सभी पाठकों के साथ सांझा कर रहा हूँ जो इस प्रकार है –

उन्होनें यह चार पैसे कमाओगे, तब समझ में आयेगा.. वाले अखाणे कहावत, का मतलब विस्तार से समझाया। उसी को मैं यहाँ आप सभी पाठकों के साथ सांझा कर रहा हूँ जो इस प्रकार है –

पहला पैसा को कुँए में डालना ...मतलब..'अपने परिवार के पेट रूपी कुँए में डालना होता है अर्थात अपना तथा अपने परिवार पत्नी, बच्चों का भरण–पोषण करना, पेट भरने के लिए।'

दूसरे पैसे से पिछला कर्ज उतारना...मतलब..'माता पिता द्वारा किए गए हमारे पालन–पोषण वाला कर्ज उतारने के लिए... यानि उनकी सेवा के लिए दूसरा पैसा है।'

तीसरे पैसे को आगे कर्ज देना है ...मतलब..'अपनी संतान को पढा' लिखा कर योग्य काबिल, बनाने के लिए ताकि वो भी आगे वृद्धावस्था में आपका ख्याल रख अपना कर्ज उतार सकें...'

चौथा पैसा को संभाल...मतलब..'आड़े वक्त के लिए जमा करने के लिए होता है, अर्थात शुभ कार्य करने के लिए दान, सन्त सेवा, असहायों की सहायता करने के लिए, यानि निष्काम सेवा करना, क्योंकि हमारे द्वारा किए गये इन्ही शुभ कर्मों का फल हमें इस जीवन के बाद मिलने वाला है। याद रखें हमारे सनातन धर्मानुसार दान दक्षिणा की तरह और भी शुभ कार्यों जैसे सत्कर्मों का फल हमें अगले जन्म में मिलता है।

अन्त में उपरोक्त वर्णित का निष्कर्ष यही है कि इस कहावत में चार पैसे का मतलब सम्पूर्ण धन से है और उसके चार हिस्सों को जिंदगी में कैसे उपयोग करना है या उनका जिंदगी में क्या महत्व है, कैसे खर्च करें, किस किस मद में खच करें, को समझ लेना है। ध्यान रखें यदि आपने तीन हिस्से किये तो ऊपर समझाये गये सारे कार्य सुचारु रूप से पूरे नहीं कर पायेंगे और चार हिस्से के बाद पाँचवे हिस्से की जरूरत ही नहीं है..!! अतः उपरोक्त वर्णित कार्यों को सही ढंग से पूर्ण करने के लिये हमें हमारे धन को चार हिस्सों में विभाजित करना आवश्यक होता है। इस तरह ऊपर उल्लेखित तथ्यों को ही संक्षिप्त में लोकोक्ति के रूप में चार पैसे कमाओगे, तब समझ में आयेगा.. कह कर सामने वाले को चार पैसों का गणित समझा दिया जाता है ।

आई शरण तिहारे

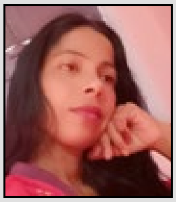

मधुबाला शांडिल्य
गोंड्डा, झारखंड

क्या मांगू मैं, तुझ से गुरूवर,
आई शरण तिहारे,
दास हूं मैं प्रभु, तेरे चरणों की,
करु वंदन मैं तिहारे,
सुख करता तूं, दुख हरता है,
नमन करूं मैं तिहारे,
क्या मांगू मैं, तुझ से गुरूवर,
आई शरण तिहारे.....

भक्ति भाव से, पूजूं तुझको,
शरण में आई तिहारे,
आप की लीला, आप ही जानो,
हम बालक हैं तुम्हारे,
क्या मांगू मैं, तुझे से गुरूवर,
आई शरण तिहारे.....

पाप करूं या पुण्य करूं मैं,
चरणों में समर्पित तुम्हारे,
राह दिखा प्रभु नेकी करूं मैं,
करूं वंदन मैं तिहारे,
शरणागत हूं तेरे चरणों में,
रख लाज तूं हमारे,
क्या मांगू मैं, तुझ से गुरूवर,
आई शरण तिहारे......

जीत भी तेरी हार भी तेरी,
हम हैं दास तुम्हारे,
दर्द भी तेरा सुख भी तेरा,
फिर भी शरण तिहारे,
जैसे भी रख प्रभु, खुद के चरणों में,
हम शरणागत तुम्हारे,
क्या मांगू मैं, तुझ से गुरूवर,
आई शरण तिहारे......

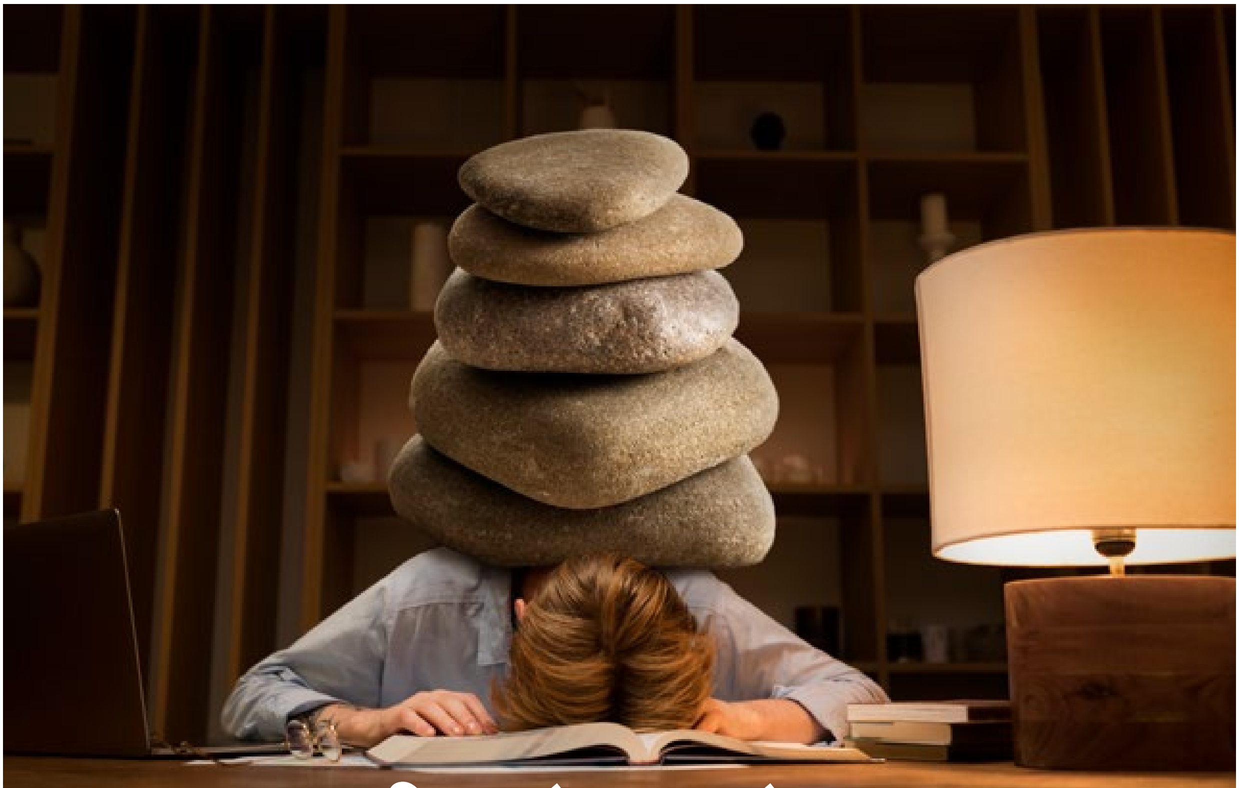

अशांत चित्त को शांत करने का मन्त्र

बारह भावनाएं (बारह अनुप्रेक्षा)

डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)
संरक्षक शाकाहार परिषद्
भोपाल

जब मनुष्य अशांत होता हैं और वह निराशा से घिर कर, नकारात्मक भावो से घिर जाता हैं ,जीवन से पलायन करना चाहता हैं .जबकि पलायन जीवन का अंत नहीं हैं बल्कि कठिनाइयों में समता भाव रखकर अपनी आत्मा का चिंतन करे और यह सुख दु:ख मात्र हमारे कर्मो का फल भोगना पड़ता हैं .अनुप्रेक्षा का आशय बार बार इन बातों का चिंतवन करने से हमें अपने और संसार की वास्तविक स्थिति जानकार अनेक विकल्पों से मुक्त हो सकते हैं

१.अनित्य भावना

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार,
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार !

अनित्य भावना हमें सिखाती है। कि यह शरीर कि जवानी,घर–वार,राज्य संपत्ति, गाय–बैल, स्त्री के सुख, हाथी, घोड़े, परिवारीजन, कुटुम्बी जन..और आज्ञा को मानने वाले नौकर..और पांचो इन्द्रियों के भोग क्षण–भंगुर हैं..हमेशा नहीं रहते हैं..अनित्य हैं..अस्थायी हैं। यह सारे सुख आकुलता को देने वाले ही हैं..और दु:ख को देने वाले ही हैं। यह सुख बिजली और इन्द्रधनुष कि चंचलता के सामान क्षण–भंगुर हैं..जिस प्रकार इन्द्र–धनुष और बिजली कुछ सेकंड के लिए ही आसमान में रहती हैं..उसी प्रकार यह इन्द्रिय जन्य सुख औ राज्य संपत्ति,गोधन,गृह,नारी,हाथी घोड़े थोड़े समय के लिए ही हैं, अनित्य हैं।

जिस प्रकार विवेकी जीव झूठे भोजन को खाने में,चाहे कितना भी स्वादिष्ट हो..कभी ममत्व नहीं दिखता है..उसी प्रकार इस अनित्य भावना को भाने से जीव इस संसार के झूठे

भोगों से,लाखो बार भोगे हुए भोगों से कभी ममत्व नहीं करता है.. और न ही इनके वियोग में अरति करता और संयोग में रति करता है। यह अनित्य भावना भाने का फल है।

२.अशरण भावना

दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार ,
मरती बिरियाँ जीव को, कोई न राखनहार!!

अशरण का अर्थ है कहीं भी शरण नहीं है। चाहे सुरेन्द्र, असुरेन्द्र, नागेन्द्र हों, खगेंद्र..नरेन्द्र हों। वह भी काल रुपी सिंह के सामने हिरण के सामान हैं, और उनको भी शरीर को त्याग कर नई योनियों में सारे महल राज पाट छोड़ के जाना पड़ता है, और कर्मो का फल भोगना पड़ता है,..चाहे कैसी भी मणि हो, मंत्र हो, तंत्र हो, बड़े से बड़ी शक्ति हो, माता, पिता, देवी, देवता, सेना, औषधि,पुत्र या कैसा भी चेतन या अचेतन पदार्थ हो मृत्यु से कोई नहीं बचा सकता है, तथा मृत्यु से कोई नहीं बच सका है, कहीं भी शरण नहीं है। यह अशरण भावना है

इस अशरण भावना को भाने से समता भाव जागृत होता है, और इस भावना को भाने वाला जीव शरीर त्याग के समय शोक नहीं करता है..और न ही किसी अन्य के देह–अवसान में शोक करता है, और न ही संसार के भौतिक–सुखों में रति करता है।

३.संसार भावना

दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान,
कहूं न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान !

यह जीव चारो गतियों में चाहे स्वर्ग हो, नरक हो, मनुष्य पर्याय हो, या तिर्यंच पर्याय हो। सब में दु:ख ही दु:ख भोगता है, कहीं भी इस संसार में सुख नहीं नहीं है..हर तरफ से हर दृष्टी से यह जीव चारो गतियों में दु:ख भोगता है..और द्रव्य, क्षेत्र, भाव, भव और काल के परिवर्तन सहता है यानि की हर विधि से हर तरीके से संसार असार है, बिना किसी सार का है, हर जगह दु:ख है..और इस संसार में कहीं भी सुख नहीं है। ऐसा चिंतन करना संसार भावना का लक्षण है।

इस भावना को भाने वाला जीव कभी भी दुखी नहीं होता है.. लेकिन संसार से उदासीन रहता है। वैरागी रहता है।

४.एकत्व भावना

आप अकेला अवतरे, मरै अकेलो होय ,
घर संपत्ति पर प्रगट ये, साथी सगा न कोय !

सारे शुभ और अशुभ कर्मो के फल जितने भी हैं..यह जीव अकेला हो भोगता है..कोई साथ न देने वाला होता है। माता, पिता, पुत्र, नारी, दोस्त, रिश्तेदार अपनी कोई रिश्तेदारी नहीं निभाते हैं। सिर्फ स्वार्थ के लिए सगे बन जाते हैं, और स्वार्थ ख़त्म होने पर धोका दे जाते हैं। चाहे सुख हो या दु:ख यह जीव अकेला ही सहन करता है, साथी–सगे तोह सब कहने मात्र के हैं।

५.अन्यत्व भावना

जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपनों कोय ,
घर संपत्ति पर प्रगट ये, तहाँ न अपनों कोय !

यह जीव और शरीर, पानी और दूध के सामान एक दुसरे से मिले हुए हैं, लेकिन फिर भी दोनों–दोनों भिन्न–भिन्न हैं। एक नहीं हैं..अगर शरीर और आत्मा एक ही होती तोह क्या मुर्दे में जान नहीं होती, फिर ऐसा क्यों होता है कि आत्मे के शरीर से निकलते ही..सारा शरीर ऐसे ही पड़ा रह जाता है, कहाँ चली जाती है उसमें से चेतनता..यानि कि हम जीव हैं, शरीर नहीं हैं। जब शरीर और आत्मा अलग हैं तब जो पर–वस्तुएं, भौतिक वस्तुएं हैं..धन, घर, परिवार है राज्य है, सम्पदा है, पुत्र है, स्त्री है..वह मेरी कैसे हो सकती है३ऐसा चिंतन करना अन्यत्व भावना है

६.अशुचि भावना

दिपै चाम –चादर मढ़ी, हाड पींजरा देह ,
भीतर या सम जगत में, अवर नहीं घिन – गेह !

यह शरीर मांस, खून, पीप, विष्ट, गंध्गी, मल, मूत्र, पसीना..आदि कि थैली है..और हड्डी, चर्बी अदि अपवित्र पदार्थों से मलिन है, और इस शरीर में से नौ द्वार में से निरंतर मैल निकलता रहता है, और इतना ही नहीं इस शरीर के स्पर्श से पवित्र पदार्थ भी अपवित्र हो जाते हैं। बहुत गंध है यह शरीर..और ऐसे शरीर से कौन प्रेम करना चाहेगा, कौन मोह रखना चाहेगा। ऐसा चिंतन करना अशुचि भावना है।

७.आश्रव भावना

मोह नींद के जोर, जगवासी घूमैंसदा ,
कर्म –चोर चहुँ ओर, सरवस लूटें सुध नहीं !

मन–वचन और काय के निमित्त से आत्मा में हलन– चलन–कम्पन रूप चंचलता को आश्रव कहते हैं..आश्रव से कर्म आते हैं..यह आश्रव बहुत दु:ख दाई है..क्योंकि इसकी वजह से आत्मा के प्रदेश कर्मो से बंधते हैं..जिससे आत्मा का अनंत सुख वाला स्वाभाव ढक जाता है,ज्ञान दर्शन स्वाभाव ढक जाता है.. इसलिए बुद्धिमान पुरुष इस आश्रव से दूर रहने के प्रयत्न में लगे रहते हैं.. इससे मुक्त होने की चाह रखते हैं.. मिथ्यादर्शन,अविरत और कषाय और प्रमाद के साथ आत्मा में परवर्ती नहीं करते हैं.. और कम करते हैं.ऐसा चिंतन करना आश्रव भावना है.

८.संवर भावना

सतगुरु देय जगाय, मोह नींद जब उपशमें,
तब कछु बनहिं उपाय, कर्मचोर आवत रुकें !

जिन्होंने पुण्य और पाप नहीं किया, शुभ और अशुभ कर्मो के फल में रति और अरति नहीं कि.. शुभ और अशुभ भाव नहीं किये, और आत्मा के अनुभव में मन को लगाया..आत्मा स्वाभाव में लीं हुए..या लीं होने..वह आते हुए कर्मो को आत्मा के प्रदेशों में मिल जाने से रोक लेंगे..कर्मो के आश्रव द्वार को बंद करेंगे,बंध को रोक लेंगे, और संवर को प्राप्त करके आकुलता रहित सुख का साक्षात्कार करेंगे..ऐसी भावना भाना संवर भावना है।

९.निर्जरा भावना

ाि दीप तप–तेल भर, घर शोधे भ्रम छोर ,
या विधि बिन निकसै नहीं, पैठे पूरब चोर

जब कर्म अपना समय आने पर फल देने लग जाए..मतलब अपने अपने समय पर फल देने लग जाएँ..और फल देकर चले जाएँ..यह तो अकाम निर्जरा है..या विपाक निर्जरा..इससे इस जीव का कोई भी लाभ नहीं है..कोई भी काम सिद्ध नहीं होता है..जब कर्म बिना फल दिए ही चले जाए..जो सिर्फ सम्यक तप के माध्यम से संभव है..तोह अविपाक निर्जरा है..सकाम निर्जरा है..जो शिव सुख को,मोक्ष सुख को आकुलता रहित सुख को प्राप्त कराती है

१०.लोक भावना

पंच महाव्रत संचरण, समितिपंच परकार,
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार !

जहाँ ६ द्रव्यों का निवास है,वह तीन लोक है..जो शास्वत ६ द्रव्यों से बना हुआ है..इसको न किसी ने बनाया है..न कोई धारण कर रहा है,न कोई चला रहा है..और न ही कभी नष्ट होंगे..और ६ द्रव्य भी शास्वत हैं..अनादि निधन हैं यह तीनों लोक ..इन तीनों लोकों में यह जीव समता भाव के अभाव में..संतोष के अभाव में, वीतरागता और वीतराग भावों के अभाव में यह जीव संसार में दु:ख सहता है, और जन्म मरण के दुखों को सहन करता है। वीतराग अवस्था पाने से यह जीव आकुलता रहित सुख को प्राप्त करता है.

११.बोधि दुर्लभ भावना

चौदह राजू उतंग नभ, लोक पुरुष संठान
तामें जीव अनादितैं, भरमत हैं बिन ज्ञान !

इस जीव ने नवमें ग्रैवेयक के विमानों तक ..जो सोलह स्वर्गो से भी ऊपर हैं..वहां भी पर्याय ली..और एक बार नहीं अनंत बार यहाँ पर्याय ले कर अह्मिन्द्र,अदि देवों तक का पद पाया, लेकिन जब भी आत्मा के ज्ञान के बिना इस जीव ने सुख लेश मात्र नहीं पायो..नरक, त्रियंच मनुष्य की योनियों में दु:ख की बात करें तोह चलता है..लेकिन स्वर्गो में भी यह जीव दुखी रहा..और वहां भी लेश मात्र भी सुख ग्रहण नहीं किया। जो की सम्यक ज्ञान के अभाव की वजह से था, और ऐसे दुर्लभ सम्यक ज्ञान को मुनिराज ने अपने ही आत्मा स्वरुप में साधा हुआ..कहीं बाहार से नहीं खोजा है..इसलिए संसार में सबकुछ सुलभ है, घर, परिवार, कुटुंब, उत्तम कुल, विद्या, धन, पैसा, बुद्धि, होसियारी। यह सब सम्यक ज्ञान की दुर्लभता के आगे सुलभ ही हैं..और यह सम्यक ज्ञान अपार सुख को प्राप्त करने वाला है। आकुलता रहित सुख को प्राप्त करता है। कर्मों का जोड़ इस सम्यक ज्ञान रुपी छैनी के द्वारा ही तोडा जाता है।

12.धर्म भावना

धन कन कंचन राजसुख, सभी सुलभ कर जान ,
दुर्लभ हैं संसार में, एक जथारथ ज्ञान!
जांचें सुर तरु देय सुख, चिंतन चिंता रैन,
बिन जांचें बिन चिन्तये, धर्म सकल सुख दैन!

जो भाव पवित्र हैं और मोह से रहित हैं..मिथ्यात्व (गृहीत और अग्रहित) से रहित हैं। वह सम्यक ज्ञान, सम्यक दर्शन और सम्यक चरित्र हैं और यह ही धर्म है..जब इस धर्म को जब यह जीव साधता है..धारण करता है..तोह अचल सुख को प्राप्त प्राप्त करता है..यानि की जहाँ मोह–मिथ्यात्व है वहां धर्म नहीं है। ऐसा चिंतन करना धर्म भावना है

विषय वस्तु दार्शनिक भावना से संलंग हैं इसके लिए जो शब्द उपयोग किये गए हैं वे विषय की पुष्टि करते हैं उनके पर्यायवाची शब्द उतने प्रभावकारी नहीं होते हैं। इसके लिए क्षमा चाहूंगा।

सद्कर्मों से बनती पहचान

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
उत्तर प्रदेश

सद्कर्मो व सदविचार से, जीवन पथ होता आसान,
कलुषित भावना रखने से, हमारा होता है नुकसान।
सदमार्ग पर चलते रहने से, मिल जाती हमें मंजिल,
सदविचार व सद्कर्म से इंसान बन सकता महान।।

ईर्ष्या द्वेष रखने से, प्रगति के पथ हो जाते अवरुद्ध,
हीन भावना रखने से, अपने सगे हो जाते हैं विरुद्ध।
हमें सदैव रखना चाहिए, सकारात्मकता का भाव,
सकारात्मक विचार से, हम रहते तन मन से शुद्ध।।

धन दौलत के लालच में, हम करने लगते भ्रष्टाचार,
पद प्रतिष्ठा के मोह में, हम खो देते अपने संस्कार।
भौतिक सुख सुविधाओ के नाते, मति मारी जाती,
जरा जरा सी बात पर, अपनों से करते हैं तकरार।।

हमारे सद्कार्यो से ही, हमारी बनती है इक पहचान।
मदद और सहयोग से, हम बन सकते हैं नेक इंसान।
व्यक्ति के अच्छे कार्य ही, लोगों को सदा याद रहते,
न कभी भुलाना चाहिए, किसी ने किया एहसान।।

अगर भला न कर सकें, तो कभी किसी बुरा न चाहें,
किसी पर न करें दोषारोपण, बना लें खुद नई राहें।
यदि कभी किसी ने किया, आपके साथ कोई भलाई,
छोटा भी यदि हो तो स्वागत करें, फैला अपनी बाहें।।